www.vi

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक — साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : ८

सोमवार २५ नवम्बर, '६८

अन्य पृष्ठों पर

'उत्तर प्रदेश दान' अक्तूबर '६९ तक ९०

आपका विज्ञान कहाँ गया ?

आलय या लय ? —सम्पादकीय ९१

अखबारी दुनिया में ग्रामदान —शामलाल ९३

—गोकुलभाई भट्ट

—आर० सी० पटेल

—उ० न० ढेबर

—सुदर्शन कुमार कपूर

—सी० ए० मेनन

—सुरेश राम

हाथल की ग्रामसभा—३ —अवध प्रसाद

खादी, उसका गिरता हुआ मूल्य और अहिंसा —आचार्य तुलसी ९६

विश्राम भाई "सर्वोदयी" १०१

पत्रिका-प्राप्ति के प्रमुख स्थान १०२

आन्दोलन के समाचार १०३

आवश्यक सूचना

"भूदान-यज्ञ" के १८ नवम्बर '६८ के अंक का परिशिष्ट "गाँव की बात" जो मध्यावधि चुनाव परिशिष्टांक था, उसकी प्रतियाँ अभी उपलब्ध हैं। जो साथी मँगाना चाहें, वे अविलम्ब १८ पैसे प्रति अंक के दर से मँगा सकते हैं। —व्यवस्थापक

सम्पादक

राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी—१, उत्तर प्रदेश

फोन : ४२८५

वकालत का धन्धा और सत्य के प्रयोग

वकालत के धन्धे में मैंने कभी असत्य का प्रयोग नहीं किया। और मेरी वकालत का बड़ा भाग केवल सेवा के लिए ही अर्पित था और उसके लिए जेब-खर्च के अतिरिक्त मैं कुछ नहीं लेता था। कभी-कभी जेब-खर्च भी अपनी ओर से कर देता था।...विद्यार्थी-अवस्था में मैं यह सुना करता था कि वकालत का धन्धा झूठ बोले बिना चल ही नहीं सकता। झूठ बोलकर मैं न तो कोई पद लेना चाहता था और न पैसा कमाना चाहता था। इसलिए इन बातों का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। दक्षिण अफ्रीका में इसकी परीक्षा तो बहुत बार हो चुकी थी। मैं जानता था कि प्रतिपक्ष के साथियों को सिखाया-पढ़ाया गया है, और यदि मैं मुवक्किल को अथवा साक्षी को तनिक भी झूठ बोलने के लिए प्रोत्साहित कर दूँ, तो मुवक्किल के केस में कामयाबी मिल सकती है। किन्तु मैंने हमेशा इस लालच को छोड़ा है। मुझे ऐसी केवल एक ही घटना याद है कि जब मुवक्किल मुकदमा जीतने के बाद मुझे यह शक हुआ कि मुवक्किल ने मुझे धोखा दिया है। मेरे दिल में भी हमेशा यही खयाल बना रहता था कि अगर मुवक्किल का केस सच्चा हो तो उसमें जीत मिले और झूठा हो तो हार हो। मुझे याद नहीं पड़ता कि फीस लेते समय मैंने कभी हार-जीत के आधार पर फीस की दरें तय की हों। मुवक्किल हारे या जीते, मैं तो हमेशा अपना मेहनताना ही माँगता था और जीतने पर भी उसीकी आशा रखता था।

मुवक्किल को मैं शुरू से ही कह देता था : "मामला झूठा हो तो मेरे पास मत आना। साक्षी को सिखाने-पढ़ाने का काम कराने की मुझसे कोई आशा न रखना।" आखिर मेरी साख तो यही कायम हुई थी कि झूठे मुकदमे मेरे पास आते ही नहीं। मेरे कुछ ऐसे मुवक्किल भी थे, जो अपने सच्चे मामले तो मेरे पास लाते थे और जिनमें थोड़ी भी खोट-खराबी होती, तो उन्हें दूसरे वकीलों के पास ले जाते थे।

वकालत करते हुए मैंने एक ऐसी आदत भी डाली थी कि अपना अज्ञान न मैं मुवक्किलों से छिपाता था और न वकीलों से। जहाँ-जहाँ मुझे कुछ सूझ न पड़ता वहाँ-वहाँ मैं मुवक्किल से दूसरे वकील के पास जाने को कहता अथवा मुझे ही वकील करता तो मैं उससे कहता कि अपने से अधिक अनुभवी वकील की सलाह लेकर मैं उसका काम करूँगा। अपने इस शुद्ध व्यवहार के कारण मैं मुवक्किलों का अखूट प्रेम और विश्वास संपादन कर सका था। बड़े वकील के पास जाने की जो फीस देनी पड़ती, उसके पैसे भी वे प्रसन्नतापूर्वक दे देते थे। इस विश्वास और प्रेम का पूरा-पूरा लाभ मुझे अपने सार्वजनिक काम में मिला।

—मो० क० गांधी

"आत्मकथा", पृष्ठ : ३१६-२०

www.vinoba.in

'उत्तर प्रदेश दान' का संकल्प २ अक्तूबर '६९ तक पूरा करने की व्यूह-रचना तैयार

प्रदेशीय ग्रामदान-प्राप्ति समिति की बैठक में प्रायः हर जिले के प्रतिनिधियों द्वारा निश्चित अवधि के अन्दर संकल्प पूरा करने का निश्चय

कानपुर : गत १६ और १७ नवम्बर '६८ को स्वराज्य आश्रम कानपुर के प्रांगण में आयोजित द्विदिवसीय बैठक में प्रदेश के लगभग सभी जिलों से आये हुए प्रतिनिधियों ने अपने-अपने काम का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हुए निश्चित अवधि के अन्दर प्रदेशदान का संकल्प पूरा करने की दृष्टि से जिलादान की व्यूह-रचना तैयार की। श्री विचित्र भाई की अध्यक्षता में आयोजित इस बैठक में काफी विस्तार से ग्रामदान-प्राप्ति की पद्धतियों पर चर्चाएँ हुईं। प्रदेश की विशालता और परिस्थितियों की प्रतिकूलता के कारण अनेक कठिनाइयों से उलझते हुए भी आगे बढ़नेवाले कार्यकर्ताओं के अन्दर संकल्प-पूर्ति के लिए निरन्तर सक्रिय बने रहने की उत्कट भावना दिखाई पड़ी। स्मरणीय है कि अबतक प्रदेश में २ जिलादान, ५६ प्रखण्डदान और १०,०१९ ग्रामदान हो चुके हैं। चमोली, वाराणसी, आजमगढ़, ये जिले जिलादान के करीब हैं। अबतक के अनुभव के आधार पर अधिकांश जिलों ने आगामी वर्ष के अगस्त तक जिलादान का काम पूरा कर डालने की आशा व्यक्त की। अभी तक १६ जिलों में थोड़ी हलचल पैदा हुई है, लेकिन ठोस काम अब तक नहीं हो पाया है।

ग्रामदान की गंगोत्री जहाँ प्रकट हुई थी, उस बुन्देलखण्ड में गदर पार्टी के संस्थापक सदस्य और सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी पं० परमानन्दजी ने अपना समय देने का निश्चय किया है। उनका आशीर्वाद पूरे प्रदेश के काम को भी गति और रवानी प्रदान करेगा, ऐसी आशा बँधती है।

बैठक में प्रायः हर जिले के प्रतिनिधियों की यह माँग रही कि गांधी-जन्म-शताब्दी-समारोह की प्रदेशीय समिति को प्रदेशदान के काम में पूरी तरह सक्रिय बनाने की चेष्टा की जाय। राज्य खादी-ग्रामोद्योग मण्डल के सचिव ने अपनी कार्यकर्ता-शक्ति ग्रामदान-अभियान में लगाने की घोषणा की। अन्य रचनात्मक संस्थाओं का सक्रिय सहयोग मिल रहा है।

५४ जिलोंवाले इस विशाल प्रदेश के हर जिले में जिला ग्रामदान-प्राप्ति समिति के गठन के लिए योजनाएँ बनीं, प्रदेशीय समिति को और भी व्यापक किया गया और अभियानों की निरन्तर व्यूह-रचना के लिए २१ सदस्यों की एक विशेष समिति भी नियुक्त हुई।

प्रदेशीय स्तर पर कोष-संग्रह के लिए १५ फरवरी, '६९ के बाद अभियान चलाने की योजना बनी है। अखिल भारत शान्ति-सेना मण्डल से प्रदेशीय समिति ने अनुरोध किया है कि प्रदेश में शान्ति-सेना के काम के लिए कुछ प्रशिक्षक तैयार कर दें।

मध्यावधि चुनाव के मौके पर सर्व सेवा संघ द्वारा निर्देशित मतदाता-शिक्षण के कार्यक्रम पर भी विचार-विमर्श हुआ। कानपुर तथा इस प्रकार के कुछ केन्द्रीय नगरों में मतदादाता-शिक्षण का सघन कार्यक्रम चलाये जाने की भी संभावना है। आये हुए प्रतिनिधियों ने **'गाँव की बात'** के मध्यावधि चुनाव अंक की ५,००० प्रतियों के वितरण की योजना बनायी है।

१७ नवम्बर '६८ को कानपुर नगर में स्वर्गीय रामस्वरूप गुप्त की स्मृति में आयोजित ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी के उद्घाटन के अवसर पर एक विशाल जनसभा में भाषण करते हुए आचार्य राममूर्ति ने कहा कि नेता, अफसर, व्यापारी और पत्रकारों के मिले-जुले चतुर्भुज में देश की प्रगति उलझ गयी है। सरकार और बाजार, ये दोनों भगवान के अतिरिक्त रहस्य बनकर प्रकट हुए हैं। इन सबकी माया का पर्दा फाड़ने के लिए ही ग्रामदान आन्दोलन है। आपने कहा कि सर्वोदय-आन्दोलन मध्यावधि चुनाव के इस मौके पर मतदाताओं के दिलों से दल के दलदल को समाप्त करना चाहता है और जाति, धर्म, सम्प्रदाय, दल आदि से मुक्त होकर अच्छे उम्मीदवार को वोट देने की बात कह रहा है, लेकिन अगले आम चुनाव तक लोक-संगठनों द्वारा 'अपने उम्मीदवार' के चयन की व्यूह-रचना करेगा।

सभा के बाद स्थानीय व्यक्तियों ने 'दल-मुक्त मतदान' के इस कार्यक्रम में सक्रिय रूप से काम करने की तैयारी प्रकट की। आशा है कि कानपुर में इस दिशा में विशेष काम हो सकेगा। —विशेष प्रतिनिधि द्वारा

दो जिलादान की भेंट

विनोबाजी को २५ दिसम्बर, '६८ तक वाराणसी और चमोली का जिलादान उनके इलाहाबाद-आगमन के अवसर पर भेंट किया जायगा।

"क्या मेरे कागजात सेये जा चुके, श्रीमान् नौकरशाह ?"
('अल-अरब' से)—सवाह अल खैर

सम्पादकीय

आपका विज्ञान कहाँ गया ?

जब विहार में सूखा पड़ा तो संकट में बड़े-बड़े संकल्प किये गये और ऐसा मालूम हुआ कि विज्ञान और योजना की पूरी शक्ति लगाकर खेती 'मानसून की गुलामी' से हमेशा के लिए मुक्त कर दी जायेगी। लेकिन हुआ यह कि संकट टला और संकल्प गये। घूम-फिरकर सरकार की योजना वहीं पहुँच गयी जहाँ पहले थी। सिंचाई के सघन क्षेत्रों में साधनवाले किसानों को ही मदद देकर उपज बढ़ाने का आसान कार्यक्रम अपना लिया गया। पिछले साल उपज अच्छी हुई, और अपनी योजना पर खुश होकर मंत्रियों और अधिकारियों ने 'खेती में क्रान्ति' का झण्डा फहरा दिया। उस 'क्रान्ति' का फल किसे मिला, कितना मिला, इससे 'क्रान्तिकारियों' को कोई मतलब नहीं। हमारे देश की योजना की शायद सबसे बड़ी सफलता यही है कि वह जनता से अलग चल सकती है, और जनता को छोड़कर सफल बतायी जा सकती है।

इस साल बरसात ने धोखा दिया। बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, मैसूर, मद्रास आदि से सूखे के समाचार आये। राजस्थान में तो सूखा इतना भयंकर हुआ जैसा लोगों की याद में कभी नहीं हुआ था। अब तात्कालिक राहत में चाहे जितना खर्च किया जाय—और खर्च किया भी जायेगा—लेकिन इस तरह के संकटों से खेती की सारी 'इकानमी' और पूरे ग्रामीण जीवन को जो आघात पहुँचता है उसे राहत देकर नहीं बचाया जा सकता। ऐसे संकट के समय लाखों परिवार टुकड़ों के लिए धनियों के हाथों हमेशा के लिए बिक-से जाते हैं। और ये श्रमिक परिवार समाज के 'शेषनाग' होते हैं, जिनकी मेहनत पर सारा समाज टिका हुआ है।

स्वतंत्रता के इक्कीस वर्ष बाद भी इस संकट का कोई हल नहीं दिखाई देता। पानी खेती के लिए चाहिए, पानी जीने के लिए चाहिए, पर अभी हजारों ऐसे गाँव हैं जहाँ पीने तक का पानी मयस्सर नहीं है।

सरकार को विज्ञान में विश्वास है। देश को अपने वैज्ञानिकों पर गर्व है। लेकिन देश की जनता के जीवन में विज्ञान अभी दिखाई नहीं देता। अज्ञान, विज्ञान, और भगवान में से जनता को अपने अज्ञान और अपने भगवान पर ही भरोसा करना पड़ रहा है। विज्ञान दफ्तर की फाइल, बाजार की मुनाफाखोरी, और सभा के नारों तक सीमित है। अब तक कहा जाता था कि भारत का ग्रामीण नागरिक दकियानूस है; विज्ञानविमुख है; लेकिन अब जब वह दिन-रात नये साधनों की माँग कर रहा है तो विज्ञान का कहीं पता नहीं चल रहा है। क्या यह विज्ञान की शक्ति के बाहर था कि हर दस बीघे पर एक कुआँ खुद जाता, और कोई गाँव ऐसा न बचता जिसमें पीने का मीठा, साफ पानी न होता ? जो देश कपड़े की एक-से-एक डिजाइनों और शौकीनी की बेशुमार चीजों के लिए पूँजी दे सकता हो वह पानी के लिए पूँजी न जुटा सके, यह योजना के युग में समझ में आने की बात नहीं है। इसे निश्चित रूप से योजना की विफलता ही माननी चाहिए। विदेशों से अन्न की भिक्षा माँगने से कहीं अच्छा है पानी के लिए पूँजी, साधन और तकनीक माँगना। उससे बुनियादी काम भी होता; और राष्ट्र के मान की हानि भी न होती।

यह सारा परिणाम है इस बात का कि इस खेतिहर देश में नेतृत्व खेतिहरों का नहीं है। क्या राजनीति, क्या शासन और क्या शिक्षा, सब उनके हाथ में हैं, जो 'शब्दों की खेती' करते हैं। जबतक नेतृत्व अनुत्पादकों के हाथ में रहेगा, तबतक उत्पादन संकट ही बना रहेगा। और जब उत्पादन में संकट होगा तो सारा जीवन संकट में घिरा रहेगा। देश उत्पादन और उत्पादकों की उपेक्षा का दण्ड भोग रहा है।

आलय या लय ?

चाहे आर० एस० एस० का जोर हो, चाहे वाम पंथियों का, इतना तय है कि काशी विश्वविद्यालय में पढ़ने-पढ़ाने का जोर नहीं है। काशी में ही नहीं, प्रयाग, लखनऊ, गोरखपुर आदि कहीं भी नहीं है। कहाँ है, यह कहना मुश्किल है। अगर कोई चाहे तो यहाँ तक कह सकता है कि आज हम जिन्हें विद्यालय कहते हैं वे किसी अर्थ में विद्या के आलय नहीं रहे; वस्तुतः उनमें विद्या का लय हो रहा है। यह बात सिद्ध करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि विद्यालयों में उपद्रव हों। जब उपद्रव नहीं भी होते, और चारों ओर शान्ति विराजती रहती है, तब भी उनमें जो अभ्यास होता है उसे विद्या का अभ्यास कहना सरासर गलत होगा। आज के जमाने में कुछ किताबें पढ़ लेना, कुछ प्रश्न तैयार कर लेना, और कुछ परीक्षाएँ पास कर लेना विद्या का अभ्यास नहीं कहा जा सकता। विश्वविद्यालयों में सचमुच क्या होता है, और जो होता है उसका देश और जमाने से कोई सम्बन्ध भी है या नहीं, यह एक प्रश्न है।

दूसरे कुछ देशों में पिछले दिनों विद्यार्थियों के जो उपद्रव हुए हैं, उनमें नये मूल्यों की कुछ स्पष्ट झलक रही है। इसके विपरीत हमारा विद्यालय-समुदाय मुश्किल से अभी तक जाति और गुट से ऊपर उठ पाया है। ऐसा लगता है कि बौद्धिक दृष्टि से हमारे विद्यालय किसी बीते जमाने की हवा में साँस ले रहे हैं। उनके ऊपर का चमड़ा हटा दीजिए तो अन्दर संकीर्णता और बर्बरता का दर्शन होता है। तभी तो तरुणों के उपद्रवों में कभी-कभी जो स्फूर्ति होती है वह भी इनमें नहीं है। है तो भरपूर सड़ाँध, जिसकी दुर्गंध पूरे शिक्षा-जगत में व्याप्त है।

एक समय था जब तरुण होना अपने में एक गुण माना जाता था। लेकिन अब ऐसा मानना संभव नहीं है। आज का तरुण फासिस्ट हो सकता है; वह कट्टर जातिवादी, सम्प्रदायवादी, वर्णवादी, राष्ट्रवादी, हिंसावादी, हो सकता है; दूसरी ओर वह प्रबुद्ध नागरिक और उदात्त

www.vinoba.in

क्रान्तिकारी भी हो सकता है। वह नये समाज का निर्माता हो सकता है; वह सभ्य समाज का संहारकर्ता हो सकता है। वह क्या है, इतना जान लेने पर ही समाज में उसका स्थान स्थिर किया जा सकता है। इसलिए विद्यालय की दीवारों या ऊँची डिग्रियों की आड़ में असामाजिक आचरण की जो छूट कभी मिल जाती थी वह अब नहीं मिल सकती। क्या शिक्षक, और क्या विद्यार्थी, हर एक को सभ्य समाज के संयम और नियम के अन्दर ही रहना पड़ेगा, नहीं तो वह अपराधी घोषित होगा, और उसके साथ उसी तरह का बर्ताव होगा।

इन उपद्रवों में कुसंस्कारिता के अनेक दोष प्रकट हुए हैं, लेकिन कुछ अच्छाइयाँ भी सामने आयी हैं। एक अच्छाई यह है कि स्वयं उपद्रवग्रस्त विद्यालयों में एक ऐसी शक्ति भी दिखाई देने लगी है जो बुद्धिपूर्वक मानती है कि ये उपद्रव दिशाशून्य हैं, निरर्थक हैं, पतन के लक्षण के सिवाय और कुछ नहीं हैं। हो सकता है कि इस बढ़ती हुई प्रतीति के अन्दर से कुछ दिन बाद शांति की शक्ति पैदा हो। दूसरी अच्छाई यह है कि अब इस बात में शुबहा नहीं रहा कि प्रचलित शिक्षा के कपड़े में इतने पैवन्द लग चुके हैं कि अब नये पैवन्द लगाना बेकार है। अब पुराना कपड़ा फेंककर नया कपड़ा लाना चाहिए। अगर शिक्षा आज की ही तरह बनी रही तो उसके परिणामों की पूरी जिम्मेदारी देश के नेतृत्व के ऊपर होगी। देश के युवकों को बर्बाद करने के अपराध से इतिहास उसे मुक्त नहीं करेगा। गरीब की गरीबी और जवान की जवानी के साथ खेल खेलना आग के साथ खेलने जैसा है।

आज हम अपने बच्चों और युवकों की वस्तुतः हत्या कर रहे हैं। हम सोचें कि उन्हें हम क्या सिखा रहे हैं, क्या दे रहे हैं? जिन बड़े लोगों के द्वारा आज का समाज बना हुआ है उसमें कौनसी अच्छाइयाँ हैं, जिन्हें वे युवकों से मनवाना चाहते हैं? जिस समाज को हम खुद निकम्मा मान रहे हैं और जिसे बदलने की बात हम आये दिन करते रहते हैं, उसे बर्दाश्त करने की अपेक्षा हम अपने युवकों से क्यों करते हैं? युवकों ने साफ-साफ यह घोषणा कर दी है कि उम्र के बड़प्पन को मानने के लिए वे तैयार नहीं हैं। एक बार शस्त्र की शक्ति के सामने भी सिर झुकाने के लिए वे तैयार नहीं हैं। वे अब उस दुनिया में ही रहने को तैयार नहीं हैं, जिसे बनाने में उनका अपना हाथ न रहा हो। वे अपने व्यक्तित्व के कायल हैं और चाहते हैं कि दूसरे भी उनके व्यक्तित्व की कद्र करें। क्या उनकी इन माँगों में बुनियादी तौर पर कोई दोष है? अगर ये माँगें गलत हैं, तो नये समाज की नयी बुनियादें क्या होंगी? अगर ये सही हैं, तो सही माँगों को मानने में देर क्यों, संकोच क्यों है? हमारे ये विश्वविद्यालय एक नये रचनात्मक लोकतंत्र तथा सर्जनात्मक सहजीवन का प्रयोग करने का साहस क्यों नहीं दिखाते?

विद्यालयों ने बुद्धि की सत्ता खो दी है। बुद्धि से अधिक उनका भी विश्वास धन, शस्त्र और अधिकार की शक्ति में हो गया है। अभिक्रम, साहस और प्रयोग-बुद्धि खोकर वे 'सुरक्षित जीवन' बिताने की होड़ में शामिल हो गये हैं। बेचारा युवक उस सुखी, सुरक्षित जीवन की आशा से भी वंचित है। उसके हृदय में क्षोभ है, निराशा है, मत्सर है। वह प्रतिकूल परिस्थितियों और दूषित प्रवृत्तियों का शिकार है। वह दूसरों का 'उल्लू' बन गया है।

अच्छा हो या बुरा, देश में नेतृत्व की कुछ शक्ति सरकार में है। इतने उपद्रवों के बाद वह कम-से-कम इतनी बात तो मान ही सकती है कि शिक्षा अब उसके वश की चीज नहीं है। सरकार की कुल बुद्धि है अफसर की फाइल और कुल शक्ति है सिपाही की बंदूक। इस बुद्धि और इस शक्ति से समाज का कौनसा प्रश्न हल होनेवाला है? नयी बुद्धि और नयी शक्ति की खोज विश्वविद्यालयों में हो सकती है, लेकिन वहाँ तो कुछ और ही हो रहा है। वे राजनीति के अभ्यास-केन्द्र बन गये हैं।

जब युवक उन्मादग्रस्त हों, और नेता प्रमादग्रस्त हों, तो भरोसा करना पड़ता है समाज की उस शक्ति का, जो देखने में सोयी हुई है, लेकिन जो इसकी सारी शक्तियों का ह्रास हो जाने पर अकेली इतिहास को आगे बढ़ाती है। क्रान्ति की यही विशेषता है कि वह उस खोयी हुई शक्ति को खोजकर ऊपर ला देती है। हमारे विद्यालयों को भी उसी शक्ति की जरूरत है।

भारत में ग्रामदान-प्रखंडदान-जिलादान

क्र०	प्रांत	ग्रामदान	प्रखंडदान	जिलादान
१.	बिहार	३२,९८८	२९०	६
२.	उत्तर प्रदेश	९,९७०	५०	२
३.	उड़ीसा	८,५०६	३६	–
४.	तमिलनाड	५,३०२	५०	१
५.	आन्ध्र	४,२००	१०	–
६.	संयुक्त पंजाब	३,६३३	९	–
७.	मध्यप्रदेश	३,२६७	८	१
८.	महाराष्ट्र	३,१२६	१२	–
९.	आसाम	१,४८९	१	–
१०.	राजस्थान	१,०२१	–	–
११.	गुजरात	८०३	३	–
१२.	बंगाल	६४४	–	–
१३.	कर्नाटक	४१०	–	–
१४.	केरल	४१८	–	–
१५.	दिल्ली	७४	–	–
१६.	हिमाचल प्रदेश	१७	–	–
१७.	जम्मू-कश्मीर	१	–	–
	कुल :	७५,८६९	४६९	१०

संकल्पित प्रांतदान : ७—बिहार, उत्तर प्रदेश, तमिलनाड, उड़ीसा, महाराष्ट्र, राजस्थान और मध्यप्रदेश

विनोबा-निवास, डाल्टेनगंज; १३-११-'६८ —कृष्णराज मेहता

अखबारी दुनिया में ग्रामदान

www.vinoba.in

[शायद यह पहला अवसर है जब कि भारत के किसी बड़े—*"टाइम्स आव इण्डिया"* जैसे—दैनिक अखबार में ग्रामदान इतनी अधिक चर्चा का विषय बना है। इस चर्चा को शुरू करनेवाले श्री शामलाल का लेख (*"टाइम्स आव इण्डिया"* के दिनांक १०,११ अक्तूबर '६८ के अंक में प्रकाशित) तो बहुत कुछ हास्यास्पद-सा है; साथ ही इतने बड़े अखबार के इतने बड़े लेखक की ओर से लेख के लिए चुने गये विषय की अनभिज्ञता को देखकर कुछ खेद भी होता है, लेकिन कुल मिलाकर श्री शामलालजी बधाई के पात्र हैं कि उन्होंने यह चर्चा छेड़ दी ! नीचे हम श्री शामलाल के लेख सहित *"टाइम्स आव इण्डिया"* में ही प्रकाशित अबतक की प्रतिक्रियाओं का सार-संकलन प्रकाशित कर रहे हैं।— सं०]

पाँच लाख कल्पित गणतंत्र

मुझे पता नहीं कि सभी सन्तों के पर होते हैं या नहीं। परन्तु मुझे इतना मालूम है कि कोई भी पक्षी उस सहजता के साथ नहीं उड़ सकता, जिस सहजता से चन्द सन्त यथार्थ की ओर से आँखें मोड़ लेते हैं। प्रत्येक गाँव को सर्वोदय-गणतंत्र बना देने का श्री विनोबा भावे का साधुई उपदेश तो स्तब्ध कर देता है। पाँच लाख सर्वोदय-गणतंत्र ! जादुई शब्द-जाल ! ग्रामीण जीवन का दर्दनाक पहलू तुरन्त ही दृष्टिओझल हो जाता है। गाँवों में व्याप्त जातिभेद, आपसी झगड़े, अस्वास्थ्यकर वातावरण, निष्क्रियता, आलस्य, ग्राम्य जीवन की अर्थहीनता, ये सब हवा में उड़ जाते हैं !

एक छोटा व्यक्ति कुछ कम से भी सन्तुष्ट हो सकता है—जाति-भेद की समाप्ति, मक्खियों और मच्छरों को समाप्त करने की कोशिश, मिट्टी की झोपड़ी की शोभा बढ़ाने के लिए फल-फूल लगे एक-दो वृक्ष, सामुदायिक जीवन के कुछ पाठ, सहकारी कृषि के एक-दो प्रयोग, एक की जगह दो फसल उगाने की योजना, नये विचारों के प्रयोग ! परन्तु श्री भावे नहीं ! उनके लिए ये सब बहुत मामूली हैं, बहुत सामान्य हैं। ये शरीर को तुष्टि पहुँचा सकते हैं; परन्तु आत्मा तो आकाश छूने को लालायित रहती है।

सर्वोदय-गणतंत्र होता कैसा है ? मुझे पता नहीं, श्री भावे ने गत सप्ताह गया में अपने भाषण में उसका कैसा चित्र खींचा। तथापि, पहले वे हमें बहुत-कुछ कह चुके हैं, अतः उनके दिमाग में जो है वह बिलकुल साफ है। उन्होंने प्रायः कहा है—"आज के आधुनिक संसार में कहीं भी सच्ची स्वतंत्रता नहीं है। इसलिए उस ग्रामराज के लिए काम करना बड़ा ही रोमांचकारी और साहसी कार्य है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपना अनाज पैदा करता है, अपना वस्त्र तैयार करता है, अपने बच्चों को शिक्षित करता है। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे के साथ सुखद सहयोग करते हुए जीवन बिताता है।" सर्वोदय-गणतंत्र का प्रत्येक नागरिक स्वतंत्र होगा, क्योंकि उसे इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं करनी होगी कि दिल्ली, वाशिंगटन या मास्को में लोग क्या कर रहे हैं।

श्री भावे एक कल्पनाशील व्यक्ति हैं और वे बहुत आगे चलकर क्या होगा, इसकी भी कल्पना कर सकते हैं। उन्हें किसी प्रकार का कोई सन्देह नहीं रहता है। हमें रहता है। हम यह जानने की कोशिश करते हैं कि व्यवहार में कल्पना कैसी उतरेगी। हम जानते हैं कि पाँच या दस एकड़ जमीन-वाला किसान अपनी जमीन में उनके साथ भागीदारी नहीं करना चाहता, जिनके पास जमीन है ही नहीं। उसका हृदय-परिवर्तन करने के लिए हम क्या करते हैं ? ऊँची जाति के लोग उन लोगों को अपने निकट आने ही नहीं देंगे, जिन्हें छूने से भी वे कतराते हैं। उन्हें हम किस प्रकार अपनी जाति का बिल्ला हटाने को तैयार कर सकते हैं ? पंचायत अधिक सम्पन्न लोगों पर कर लगाने में अपने अधिकारों का उपयोग नहीं करेगी। फिर गाँव को अपने लोगों को उत्तम सेवाएँ उपलब्ध करने के लिए पैसे कहाँ से मिलेंगे ? उन्हें सहकारी जीवन-पद्धति सिखायेगा कौन ?

और फिर, प्रत्येक किसान से हम कैसे इस बात का आग्रह कर सकते हैं कि वह अपने लिए धान, और गेहूँ, तरकारी और मिर्च-मसाले, और यदि कपड़ा पहनना चाहता है तो, कपास भी पैदा करे ! और यदि उसकी जमीन सिर्फ बाजरा उगाने लायक हुई तो ? यदि आज हम उसे अपना वस्त्र स्वयं बुन लेने के लिए तैयार भी कर लें तो इस बात की क्या गारंटी है कि कल वह उससे ऊबकर उसे छोड़ नहीं देगा ! आज भी ग्रामीण जो खादी तैयार करते हैं, उसके लिए मिल-वस्त्र पर शुल्क लगाकर क्यों उपदान देना पड़ता है ? यह इस बात की चेतावनी है कि यदि सर्वोदय-गणतंत्र के नागरिक अपनी कताई-बुनाई करने लगें, तब भी वे दिल्ली की बिलकुल ही उपेक्षा नहीं कर सकते। किसी-न-किसीको तो मिल-वस्त्र पर शुल्क लगाना ही पड़ेगा, ताकि खादी-बुनकर जीवन-वेतन प्राप्त करने के लिए आश्वस्त हो सकें। किसी-न-किसीको इन दोनों के बीच की प्रतियोगिता को नियंत्रित करना ही होगा।

बहरहाल, प्रत्येक गाँव के बिलकुल स्वतंत्र रहने में ही कौनसी अच्छाई है ? यदि जो काम वह कर सकता है उसे अच्छी तरह करने के बदले अपनी शक्ति अंट-संट और अनार्थिक कार्यों में लगाता है तो उसका जीवन-स्तर नीचा ही रहेगा। व्यापक बाजार से विमुक्ति न सिर्फ उसके पहल को, बल्कि नये कौशल सीखने की उसकी इच्छा को भी समाप्त करेगी। गाँव को नये विचार दिये जाने की आवश्यकता है, न कि उससे बचाना है। समृद्ध बनने के लिए इसे बड़े जीवन में भाग लेना ही चाहिए।

साधुई सलाह

परन्तु देश में अन्य अनेक चीजों की तरह ही साधुई सलाह को भी जैसे का तैसा नहीं मान लेना चाहिए। हम औरों से यह अच्छी तरह जानते हैं कि विचार और कार्यान्वयन के बीच कितनी दूरी रखनी चाहिए। अनुभव से हमने सीखा है कि बात जितनी बड़ी की जाय, उसे कार्यान्वित करने का अर्ज उतना ही कम होता है। जापानी ढंग से

धान की खेती करने के लिए लोगों से आग्रह करने पर वे उसे अस्वीकार भी कर सकते हैं, क्योंकि उसमें खेत में रोजाना एक-दो घण्टे ज्यादा काम करना होता है। परन्तु सर्वोदय-गणतंत्र बनाने का आवाहन आत्मा को सन्तोष पहुँचाता है। यह गरीबी को बहुत-कुछ एक देन बना देता है।

www.vinoba.in

मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि श्री भावे का मतलब यह नहीं है। उन्होंने अपने जीवन के सर्वोत्तम वर्ष ग्रामीणों के कल्याणार्थ काम करने में बिताये हैं। परन्तु कुछ कारणों से उन्होंने अपने अनुभवों पर विशेष प्रकाश नहीं डाला है। उन्होंने सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्नों की उपेक्षा की है।

भूमिहीनों के लिए उन्होंने जो २० लाख एकड़ से भी अधिक जमीन प्राप्त की, उसका क्या हुआ? वे ग्रामदानी गाँव कैसे हैं और क्या कर रहे हैं, जहाँ कि सभी लोग सहकारी कृषि व जीवनदान का प्रयोग करने के लिए सबकी जमीन एक में मिला देने को सहमत हो गये हैं?

यह एक ऐसा अवसर था जब कि यदि पाँच लाख नहीं तो कम-से-कम दर्जन भर सर्वोदय-गणतंत्र बनाये जा सकते थे, ताकि अन्य गाँव उनका अनुकरण करें। परन्तु परिणाम क्या हुआ? अनेक ग्रामदानी गाँव आदिवासी क्षेत्रों में हैं, जहाँ कि लोगों को सहकारी जीवन-कला में प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं। जैसा कि श्री मिरडल ने बताया है कि ये वैसे गाँव हैं, जिनमें भूमि-सुधार की कोई वैसी आवश्यकता है ही नहीं। अन्य गाँवों में अवस्था जैसी-की-तैसी बनी हुई है।

इस सम्बन्ध में श्री भावे द्वारा प्रस्तुत चित्र प्राप्त करना अच्छा होगा। कितने ग्रामदानी गाँवों में सही माने में जमीन के छोटे-छोटे टुकड़ों को मिलाकर एक कर दिया गया है और कितने गाँवों में यह केवल कागजी भर रहा है? इन गाँवों में प्रति एकड़ उत्पादन-वृद्धि की दर क्या रही है? किस हद तक उन्होंने स्वावलम्बन प्राप्त कर लिया है? उनमें से कितनों को अभी अधिकारियों द्वारा प्रदत्त सहारे की आवश्यकता है? क्या यह सही है कि अनेक लोगों ने अपनी भूमि मिलाने का प्रस्ताव इस आशा से स्वीकार किया था कि उन्हें उर्वरक, उत्तम बीज तथा अन्य साधन सहज ही मिल जायेंगे? पाँच लाख सर्वोदय-गणतंत्र बनाने की घण्टों हवाई बातें करने के बदले एक ग्रामदानी गाँव का सूक्ष्म अध्ययन करना कहीं अधिक लाभकर होगा!

गया में श्री भावे द्वारा दिये गये भाषण की अखबारी रिपोर्ट से यह मालूम होता है कि उनके पास ग्रामदानी गाँव के विषय में कहने को कुछ विशेष नहीं था। परन्तु उन्होंने इस बात पर पूरा बल दिया कि संसदीय प्रणाली असफल रही है। संसदीय प्रणाली कोई बहुत सफल नहीं रही है। कई लोगों के पास खाने को नहीं है, तो कई लोगों के पास काम नहीं है। विदेशी सहायता पर निर्भरता के कारण देश पर तरह-तरह के दबाव पड़ते हैं। गरीब और अमीर के बीच की खाई और चौड़ी हुई है। सार्वजनिक जीवन की एकता टूटती जा रही है। इससे जो बुराइयाँ पैदा हुई हैं उनका कोई अन्त नहीं है। परन्तु किया क्या जाय? श्री भावे का रहस्यमय उत्तर है: "दल का बिल्ला उखाड़ फेंको।"

परन्तु यह तो बड़ा ही सहज और सरल हल है। जैसा कि प्रत्येक छोटे गाँव को रामराज्य बनाने का उनका नुस्खा है। श्री भावे ने यह जानने की कोशिश नहीं की है कि यह काम होगा कैसे। दल का बिल्ला लगाये बिना भी लोगों को दल के रूप में काम करने से कौनसी चीज रोक सकती है? क्या हर दल के अन्दर के अलग-अलग गुट अपना काम नहीं कर लेते? क्या ग्राम-स्तर पर दलरहित लोकतंत्र का विचार साकार हुआ है? फिर कैसे यह राष्ट्रीय स्तर पर सफल हो सकता है, जहाँ कि दाँव बहुत बड़ा है? दोनों ही मामलों में यह खुली प्रतियोगिता है—एक, ग्राम-विकास निधि के लिए और दो, केन्द्रीय सरकार को चलाने हेतु आवश्यक विशाल शक्ति के लिए।

हृदय परिवर्तन

बिल्ला बदलने या बिल्ला हटा देने से कुछ नहीं होगा। श्री भावे के कार्यक्रम में अन्ततः सार्वजनिक जीवन में लोभ का त्याग करने को कहा गया है। परन्तु उसके लिए हृदय-परिवर्तन की आवश्यकता है और अब हमें यह अच्छी तरह समझना चाहिए कि यह कोई आसान काम नहीं है। नैतिक उपदेश व्यक्ति को बदल सकते हैं। परन्तु समाज में परिवर्तन तभी आ सकता है, जब कि प्रत्येक नागरिक के कानूनी कर्तव्य की स्पष्ट व्याख्या करते हुए उसके आधार पर सुनियोजित सामाजिक कार्रवाई की जाय।

जब श्री विनोबा भावे हवा में बातें करना छोड़ श्रमिकों पर नजर डालेंगे तो पायेंगे कि हमें पाँच लाख रामराज्य की नहीं, बल्कि निम्न स्तर पर कुछ और शिक्षा तथा उच्च स्तर पर कुछ और ईमानदारी की आवश्यकता है। अभी हमारे बीच गरीब बहुत दिनों तक रहेंगे, परन्तु यदि उन्हें उत्साहित किया गया व जीने की प्रेरणा दी गयी तो उनकी अवस्था में बहुत-कुछ सुधार हो जायगा।*

—शामलाल

मेरा गाँव : एक वास्तविक इकाई

न तो मैं ग्रामदान द्वारा सर्वोदय के दर्शन और कार्यक्रम की व्याख्या प्रस्तुत करने जा रहा हूँ, और न ही ग्रामस्वराज्य की लोकनीति की वकालत करने जा रहा हूँ, जो कि मेरे दिमाग में सम्भव, व्यावहारिक और आसानी से कार्य रूप में परिणत करने लायक है। मैं तो अपना ही उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

मैं राजस्थान के सिरोही जिले के ग्रामदानी गाँव हाथल का नागरिक हूँ। लगभग ३२५ परिवारों और ८,००० बीघा भूमिवाले इस गाँव का सन् १९६० के अंत में ग्रामदान हुआ था। ग्रामदान के बाद वहाँ सबकी राय से एक ग्रामसभा का गठन हुआ था। तब से आज तक वह ग्रामसभा ग्रामहित के लिए सफलतापूर्वक काम करती आ रही है।

अवसर मिलने पर ग्रामदान कोरी कल्पना की चीज नहीं रह जाती, बल्कि गाँव खुशहाल स्वच्छ और स्वाश्रयी इकाई बन जाता है। ग्रामदानी गाँव किसी भी हालत में अलग-

* 'टाइम्स आव इण्डिया', दिनांक १०,११ अक्तूबर, '६८ के अंक में पृष्ठ : ६ पर प्रकाशित।

थलेंगे इकोई नहीं होंगे, बल्कि विश्वशान्ति और एक विश्व के लक्ष्य को सामने रखते हुए पूरी दुनिया से जुड़े होंगे।★

—गोकुलभाई दौ० भट्ट

मानवोचित लोकतंत्रका निर्माण कैसे ?

श्री शामलाल ने आचार्य विनोबा भावे के आदर्श समाज-कल्पना (यूटोपिया) की जो खुली आलोचना की है उसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ !···लेकिन श्री शामलाल ने पक्षमुक्त लोकतंत्र की जो आलोचना की है, वह मान्यता के विपरीत है। उन्होंने अपने विषय को विस्तार के साथ नहीं पेश किया। देश की मौजूदा राजनीतिक परिस्थिति पर उन्होंने अपनी राय जाहिर की है, लेकिन सही कदम उठाने के सवाल पर वे चुप लगा गये हैं। क्या आज के बिना मतलब के लिए बनाये गये मोर्चे, अनशन और हड़तालें आज की राजनीतिक प्रतिक्रिया के ही परिणाम नहीं हैं ? क्या आज की बढ़ती हुई अशान्ति और सत्ता की राजनीति के बीच जो लगाव है, वह जाहिर नहीं है ? यदि ऐसा है तो हम सत्ता की राजनीति के गन्दे दाँतों को कैसे निकाल बाहर करें ? लोकतंत्रात्मक राजनीति को कैसे मजबूत पाये पर खड़ा किया जाय यह एक परेशानी में डालनेवाला सवाल है और इस सवाल पर श्री शामलाल ने मौन रहना पसन्द किया है। आज की अराजक व्यवस्था की बाढ़ ने जो ध्वंसलीला की है, उसमें से मानवोचित लोकतांत्रिक व्यवस्था का निर्माण कैसे हो सकता है यह मुख्य सवाल है। राजनीतिक भाग्यवाद के अन्तर्गत इसका उत्तर नहीं मिल सकता। ऊपर के स्तर पर भ्रष्टाचार कम करना और नीचे के स्तर पर अंधविश्वास मिटाना राजनीतिक अभिप्राय है। इस समस्या पर हमें कुछ अधिक गहराई तक विचार करने की जरूरत है।★

—आर० सी० पटेल, बड़ोदा

★ 'टाइम्स आव इण्डिया' दि० १५-१०-'६८ : पृ० ८ पर; हाथल के कार्यों का कुछ विवरण भी प्रकाशित हुआ था। हमने पूरी अध्ययन-रिपोर्ट ही "भूदान-यज्ञ" के दिनांक ११, १८, २५ नवम्बर, '६८ के तीन अंकों में प्रकाशित की है।

ग्रामदान : एक सही परिप्रेक्ष्य

मैंने 'पाँच लाख कल्पित गणतंत्र' नामक लेख ध्यान से पढ़ा। जिस तीव्र भाषा में लेख लिखा गया है तथा जो निष्कर्ष निकाले गये हैं, उससे मुझे कोई ताज्जुब नहीं हुआ। परन्तु क्या दोनों ही विषयान्तर नहीं हैं ?

ग्रामदान के उद्देश्य को समझना आवश्यक है। यह 'राज्यवाद' के विपरीत है, भले ही वह प्रशासनिक कार्यवाही के लिए हो या कल्याण-कार्यों के लिए। इस लेख में जिस राज्य-सरकार की बात कही गयी है, ग्रामदान में उसका कोई स्थान ही नहीं है। कल्पना उस तरह के पाँच लाख गणतंत्र बनाने की नहीं है, जिस तरह कि लेखक ने समझा है। यह तो लोगों को धीरे-धीरे अपनी जिम्मेदारी समझने तथा तदनुसार काम करने की ओर ले जाना है। ग्रामदान लोगों को स्वावलम्बी बनने हेतु शिक्षा देने की एक प्रक्रिया है। स्वावलम्बन गणतंत्रवाद नहीं है।

फिर स्वावलम्बन की यह कल्पना इस विचार पर आधारित नहीं है कि व्यक्ति या गाँव अपने मिर्च-मसाले खुद ही पैदा करें। यह इस विचार पर आधारित है कि गाँव में रहनेवाले विभिन्न जातियों, सम्प्रदायों और धर्मों के लोग चन्द बुनियादी जिम्मेदारियों में हिस्सा बँटायें। वे भूमि में हिस्सा बँटायेंगे। प्रत्येक ग्रामदानी ग्रामीण अपनी भूमि का पाँच प्रतिशत गाँव को दान दे देगा। वे अपनी आय में हिस्सा बँटायेंगे। प्रत्येक ग्रामदानी ग्रामीण अपने वार्षिक उत्पादन का ढाई प्रतिशत दान में देगा। वह नियत आय में से एक दिन की आय दान में देगा। इस प्रकार प्राप्त भूमि भूमिहीन श्रमिकों में बाँट दी जायेगी। इस प्रकार एकत्रित नकद और अन्य सामग्री ग्रामनिधि में जमा होगी। भूमि गाँव के नाम पर होगी। ग्रामसभा भूमि की ट्रस्टी होगी।

ग्रामसभा को स्रोत इकट्ठे करने की अपनी क्षमता देखते हुए और अपनी प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए अपनी योजना तैयार करना है। इस प्रकार ग्रामदान सम्पूर्ण ग्रामसमाज के लिए आयोजन की ठोस बुनियाद डालेगा।

उपरोक्त लेख का लेखक यह समझता है कि अधिकांश ग्रामदान तो सिर्फ कागजी ग्रामदान हैं। परन्तु इस सन्दर्भ में यह पूछा जा सकता है कि 'वोट' क्या है ? क्या एक कागज का टुकड़ा नहीं है ? इसका महत्व इसीलिए हो जाता है कि समाज और राज्य इसे एक विशेष प्रकार का कागज समझते हैं और इसे कुछ अधिकार प्रदान करते हैं। और यह बहुमत को जनता की सरकार बनाने का आदेश देता है। फिर, ये रुपये के नोट भी कागज के सिवा क्या हैं ? सरकार और जनता इसे जो मान्यता देती है, वही उसका मूल्य है। ग्रामदानी गाँवों के मामले में यह कानूनी व्यवस्था की गयी है कि आवेदन-पत्रों की अच्छी तरह जाँच-पड़ताल कर उन्हें सही होने का प्रमाण-पत्र दिया जाय। जैसे ही आवेदन-पत्र सही मान लिया जाता है और गाँव पर ग्रामदानी कानून लागू हो जाता है, वर्तमान सामाजिक और आर्थिक सम्बन्धों में संशोधन हो जाता है। सबसे बड़ी बात तो स्वेच्छा से यह संशोधन करना है। इस तरह की क्रान्ति के भी निहितार्थ हैं, जिनका अच्छी तरह अध्ययन किया जाना है।

लेखक यह समझता है कि भारतीय ग्रामीण बिलकुल निर्बुद्ध है और उसे अपने हित की ही जानकारी नहीं है। मैं यह मानता हूँ कि जहाँ तक अपने हित को समझने की बात है, ग्रामीण कुशाग्र बुद्धि है। वह महसूस करता है कि विनोबाजी एक ही काम के जरिये उसे चौतरफे खतरे से बचाने की कोशिश कर रहे हैं।

सर्वप्रथम, मैंने जो अध्ययन किया है उसके आधार पर मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि ग्रामदानी गाँव में सामुदायिक प्रयास से गाँव सामाजिक रूप में और मजबूत होगा तथा उसकी आर्थिक जीव्यता और साख बढ़ेगी। द्वितीय, बंधक अथवा बिक्री का काम ग्रामसमाज की राय से किया जायेगा, यह ग्रामीणों को साहूकार के चंगुल

★'टाइम्स आव इण्डिया' : १७-१०-'६८

www.vinoba.in

से मुक्त करेगा। तृतीय, आपसी 'समझ-बूझ' के आधार पर ग्राम-आयोजन किया जा सकेगा; कहने का तात्पर्य यह है कि आयोजन 'गाँव की व्यावहारिक समस्याओं को समझते हुए' किया जायेगा, न कि 'शहरी जटिल ढंग' से। चतुर्थ, यह ग्रामीण को राजस्व प्रशासन की लालफीताशाही तथा न्यायालय के विवाद से बचायेगा, क्योंकि ग्रामसभा विवादों को सुलझाने की जिम्मेदारी उठाती है। और इस पर भी गाँव स्वतंत्र समाज होगा। उक्त लेख का लेखक ग्रामीणों को आचार्य विनोबा भावे के स्वप्निल के विरुद्ध चेतावनी देने के लिए स्वतंत्र होगा। वह ग्रामीणों को आचार्य और उनके खादी-कार्यकर्ताओं के दल के खब्तों के प्रति भी चेतावनी देने के लिए स्वतंत्र होगा। वह उन्हें यह समझाने के लिए भी स्वतंत्र होगा कि आयोजन की समस्याओं को किस प्रकार शहरी उपागम अपनाकर दूर किया जा सकता है, बशर्ते कि वे उसकी भाषा समझ सकें। निस्सन्देह उसे जनता को अपने साथ लेकर चलना होगा। एक बार ग्रामसभा के काम आरम्भ कर देने पर विनोबाजी उसके काम के विषय में कोई दावा नहीं करते और न ही उस पर कोई अधिकार जमाते हैं। वे अपने सभी सामाजिक और आर्थिक मामलों में ग्राम-समाज के मतानुसार निर्णय लेने को पूर्णतया स्वतंत्र होंगे। जनमत का सिद्धान्त आन्तरिक झगड़ों के विरुद्ध गारंटी है। यह ग्रामदानी गाँव को अखिल भारतीय प्रशासनिक और राजनीतिक ढाँचे से अलग नहीं करता। यह उस ढाँचे के लिए स्वतंत्र लोकतांत्रिक और समतावादी आधार प्रदान करेगा।

इस उपागम में गलत क्या है? उक्त लेख का लेखक यह तर्क कर सकता है कि यह केन्द्रीय योजना-आयोग और राज्यों के आयोजन विभागों के अधिकारों को धीरे-धीरे कम कर देगा। परन्तु योजना-आयोग तथा राज्य आयोजन विभागों, जहाँ कहीं भी वे हैं, ने अपनी हवाई परियोजनाओं के जरिये क्या अपने को समाप्त किये जाने योग्य नहीं बना लिया है? सम्भवतः विनोबाजी वह व्यक्ति नहीं हैं जिन्हें कि यह बताने की जरूरत है, कि वे हवाई बातें करना छोड़ जमीन पर चलें। बताने की जरूरत है, पर किसी और को। यदि ग्रामदानी गाँव में ग्राम-आयोजन कृषि-विकास, मवेशी-विकास और ग्रामोद्योग-विकास के साथ आरम्भ होता है तो यह कोई उल्टी बात नहीं होगी। यह तो बहुत पहले राष्ट्रीय स्तर पर ही किया जाना चाहिए था।

लेखक को तथा अन्य लोगों को भी यह मालूम होगा कि विनोबाजी देश में सर्वाधिक अद्यतन भारतीय नेता हैं। उन्हें २५ भाषाएँ आती हैं। उन्हें राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं की पूर्ण जानकारी है। भारत के गाँवों के विषय में सारे आँकड़े उनकी जुबान पर हैं। भारतीय अवस्थाओं का १५ वर्षों तक सूक्ष्म अध्ययन और ५० वर्षों तक क्षेत्रीय कार्य के आधार पर व्यक्त किये गये विचारों पर गंभीरतापूर्वक और विस्तार से ध्यान देने की जरूरत है और लेखक ने जैसा बताया है उससे कहीं अधिक वास्तविकता से ध्यान देना है

विनोबाजी जानते हैं कि बिहार के दरभंगा जिले में प्रति व्यक्ति चौथाई एकड़ जमीन और सारण जिले में प्रति व्यक्ति तिहाई एकड़ जमीन वर्तमान ग्रामसमाज को जिन्दा रखने के लिए किसी भी तरह पर्याप्त नहीं है। अतः वे ग्रामीणों को इतने सरल ढंग से समझाते हैं कि एक ग्रामीण महिला भी आबादी सीमित रखने की आवश्यकता आसानी से समझ जाय। वे वेद से यह उद्धरण देते हैं कि अधिक सदस्यवाले परिवार का जीवन अच्छा नहीं रहता और मृत्यु के बाद भी वे सुखी नहीं होते। राम का उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि दो बच्चे पर्याप्त हैं। वे अन्य धर्मग्रन्थों के उद्धरण देकर भारतीयों को यह समझाते हैं कि उन्हें अपनी आवश्यकताओं को सीमित तथा अपने स्रोतों को संरक्षित रखने की आवश्यकता है। विनोबाजी जो कहते हैं उसे टेपरेकार्ड कर यदि ग्रामीणों को सुनाया जाय तो वे अपने परिवार को छोटा रखने के लिए गंभीरतापूर्वक ध्यान देंगे, जब कि सरकार के सारे प्रचार-यंत्र भी वह काम नहीं कर सकते।

स्कूलों और कालेजों में जो बरबादी हो रही है, विनोबाजी उसके प्रति भी सचेत हैं। वे शिक्षकों का संघ बनाने की कोशिश कर रहे हैं—शिक्षकों के अधिकारों के लिए नित नयी माँग करने के लिए नहीं, बल्कि बिना किसी राजनीति में पड़े शिक्षण-व्यवसाय के हित में काम करने के लिए। विनोबाजी यहाँ तक व्यावहारिक हैं कि बिहार के मुसलमानों से इस बात का आग्रह कर रहे हैं कि वे उर्दू को राज्य की सरकारी भाषा बनाने का अपना आन्दोलन बन्द करें। विनोबाजी ही सद्भावना और कर्तव्य के आधार पर विकल्प प्रदान कर संविधान में निर्धारित सिद्धान्तों में भूमिहीनों का विश्वास बढ़ाने की कोशिश कर रहे हैं, भले ही वे भूमिहीन तेलंगाना के हों या नक्सालबाड़ी के।

एक बात और। सर्व सेवा संघ अपने दायरे के बाहर समाजशास्त्रियों व अर्थशास्त्रियों के दल बनाने का विचार रखता है, ताकि वे ग्रामदान आन्दोलन के कार्य का अध्ययन करें और रचनात्मक सुझाव दें। मैं मानता हूँ कि बुद्धिजीवियों और संगठकों के बीच सम्पर्क आवश्यक है। परस्पर सम्पर्क से निश्चित ही दोनों को लाभ होगा।*

—उ० न० ठेबर

पदप्राप्ति की आपाधापी

श्री विनोबा भावे सार्वजनिक जीवन में चुनाव की पद्धति के बदले सर्वसम्मति का तरीका प्रचलित करना चाहते हैं। लेकिन सर्वोदय के अन्दर पद-प्राप्ति के लिए जितनी आपाधापी चलती है, उसके आगे राजनीतिक दल शर्म का अनुभव करेंगे!†

—सुदर्शन कुमार कपूर, नयी दिल्ली

भारतीय पत्रकार क्षेत्र में आयें

भारतीय पत्रकार दूर-दूर ही बैठे न रहें, बल्कि अपनी बौद्धिक कपोल-कल्पना के आवरण से बाहर निकलकर प्रत्यक्ष क्षेत्र में आयें और देखें कि सन्त विनोबा और उनके साथी वस्तुतः क्या कर रहे हैं। श्री शामलालजी जैसे बुद्धिजीवियों से अपेक्षा है कि यदि वे गहराई से देखें तो निश्चित ही ग्रामदान-

* यह लेख संक्षेप में 'टाइम्स आव इण्डिया' के ता० १९-१०-'६८ पृ० ६ पर छपा था।
† 'टाइम्स आव इण्डिया' : २४-१०-'६८

आन्दोलन का महत्त्व समझ सकेंगे। लेकिन ऐसे आधारहीन आक्षेप भूदान के समय भी होते रहे हैं और आज भी हो रहे हैं, फिर भी विनोबा और उनके साथी कार्यकर्ताओं के कदम डगमगानेवाले नहीं हैं।*

—सी. ए. मेनन

www.vinoba.in

यूटोपिया भी, हकीकत भी

श्री शामलाल का '५० हजार यूटोपियाज' नामक लेख सर्वोदय आन्दोलन के लक्ष्य और कार्य-पद्धति के बारे में अनभिज्ञता का सूचक है।

गाँव में रहनेवाली आबादी के विभिन्न तबकों के बारे में एक बुनियादी तथ्य यह है कि लोगों के आपसी सम्बन्धों में निर्दय शोषण और दबाव मौजूद है। नीचे के स्तर पर शिक्षण और ऊपर के स्तर पर ईमानदारी की प्रक्रिया से आज की बुरी हालत कुछ हद तक कम होगी इसमें शक नहीं है, लेकिन इससे इस हालत का अन्त नहीं होगा।

श्री शामलाल ने सर्वोदय के ग्राम-स्वराज्य की कल्पना को 'यूटोपियन' बताया है। यह गलत है। यहाँ मैं सुप्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डा० आर्नल्ड टायनबी का उद्धरण देना चाहता हूँ। अपने एक लेख में उन्होंने कहा है: "नीचे की बुनियाद में ग्रामीण समुदाय और ऊपरी स्तर पर विश्व-सरकार।" क्या यह यूटोपिया की माँग नहीं है? यह तो खूब अच्छी तरह जाना हुआ, आजमाया हुआ संघीय प्रणाली का कार्यक्रम है।

मैं कहना चाहता हूँ कि यदि ग्रामदान यूटोपिया है, फिर भी इसकी आजमाइश होनी चाहिए। इतिहास इस बात का साक्षी है कि आज का यूटोपिया कल की हकीकत बनता है। ग्रामदान एक विधायक हकीकत बनने जा रहा है। इसके जरिये भारत की शकल बदल जायेगी। यह भारत में अहिंसक और शोषण-मुक्त समाज-रचना कायम करेगा।†

—सुरेशराम, इलाहाबाद

* 'टाइम्स आव इंडिया' : ५-११-'६८
† 'टाइम्स आव इण्डिया' : १२-११-'६८

हाथल की ग्रामसभा—२

ग्राम-स्वामित्व

(कार्य-पद्धति और वैचारिक परिवर्तन का एक अध्ययन)

[कुमारप्पा ग्राम-स्वराज्य शोध संस्थान द्वारा कराये गये इस अध्ययन के क्रम में पिछले दो अंकों में आप पढ़ चुके हैं ग्रामदानी गाँव हाथल की ग्रामसभा के संगठन, स्वरूप और निर्णय-पद्धति के बारे में। इस अंक में प्रस्तुत है सर्वसम्मति और सर्वानुमति तक पहुँचने की कुछ प्रयोगसिद्ध पद्धतियाँ और ग्रामस्वामित्व के सम्बन्ध में गाँव के लोगों की भावनाएँ। —सं०]

पिछले अंक में ग्रामसभा के कुछ प्रमुख निर्णय दिये गये थे। कुछ निर्णय कार्यकारिणी द्वारा भी होते हैं। ग्रामसभा के कार्यों के संचालन, देखरेख एवं बाहर से सम्बन्ध स्थापित करने का कार्यभार कार्यकारिणी पर है। फिर भी सभी निर्णय की सूचना, (१) मंदिर एवं प्रमुख स्थानों पर नोटिस लगाकर (२) डुग्गी पिटवाकर, (३) आपसी चर्चा द्वारा गाँव में सबको दी जाती है। यदि आवश्यकता हुई तो किसी खास मसले को लेकर ग्रामसभा या कार्यकारिणी की विशेष बैठक होती है। पिछले अंक में प्रकाशित सारिणी से स्पष्ट है कि जिन प्रमुख निर्णयों का उल्लेख किया गया है, उनमें से २३ सर्वसम्मति से किये गये जो कि कुल निर्णय (३०) का ७६·६६ प्रतिशत है। शेष ५ निर्णय, जो कि कुल का १६·६६ प्रतिशत है सर्वानुमति से किये गये। एक प्रस्ताव पर विशेष मतभेद होने के कारण उस पर मुक्त चर्चा हेतु समय दिया गया और बाद में वह प्रस्ताव वापस ले लिया गया। अपने मतों को व्यक्त करते समय वक्ताओं ने सामान्यतया यह भाव प्रकट किये कि भूमि के अलावा अन्य सम्पत्ति, मकान, कुएँ-सम्बन्धी प्रश्नों पर कभी-कभी आपस में थोड़ा मतभेद होता है। पर अभी तक प्रत्यक्ष और अन्तिम समय तक 'विरोध' का मौका नहीं आया है। सर्वसम्मति या सर्वानुमति तक पहुँचने की प्रक्रिया की तलाश में हमने पाया कि 'मुक्त चर्चा' गुत्थियों को सुलझाने एवं मतभेदों को दूर करने का सबसे सुन्दर 'गुर' है। गाँव में ऐसे दो-चार व्यक्ति मिले, जो गुत्थियोंवाले सवालों को 'पब्लिक ईशू' बनाकर गाँव में उसकी खूब चर्चा करते हैं। इससे सबको एक-दूसरे के मत का अंदाज लग जाता है और कोई-न-कोई सुलझाव निकल ही जाता है; उस स्थिति में :

(१) प्रस्तावक अपनी वास्तविक स्थिति समझ लेता है और प्रस्ताव वापस ले लेता है।

(२) यदि आवश्यकता हुई तो उस पर विचार करने के लिए कमिटी का भी निर्माण किया जाता है।

(३) कभी-कभी कोई उससे अच्छा समाधान निकल आता है, जो कि सबको मान्य हो—जैसे कि मन्दिर के खर्च के लिए २० पैसे का प्रस्ताव। काफी लोगों ने इसके पक्ष में मत व्यक्त किये। पर यह सबके ऊपर भारी बोझ था। अन्त में सामूहिक खेती का सुन्दर रास्ता निकला। अब सैकड़ों रुपये हर साल सामूहिक खेती से आ जाते हैं। गाँव में राजनीतिक गुटबन्दी देखने को नहीं मिली। वैसे किसी दल-विशेष के प्रति वैचारिक झुकाव नहीं है, यदि झुकाव है तो ग्रामदान के प्रति। जहाँ तक मत देने का प्रश्न है, इस गाँव के लोग कांग्रेस को मत देते हैं। परन्तु यहाँ कांग्रेस का कार्यकर्ता एक भी नहीं। ग्रामसभा में कांग्रेस या किसी दल को कोई स्थान नहीं है। यह भी इस गाँव का सौभाग्य मानना चाहिए कि ग्रामसभा 'दलमुक्त' है।

(३)

ग्रामदान में सबसे क्रान्तिकारी तत्त्व व्यक्तिगत स्वामित्व का पूर्ण विसर्जन है। ग्रामदान के बाद पूरी जमीन ग्रामसभा के नाम होती है और व्यक्ति को मात्र जोतने-बोने का अधिकार रहता है। हाथल के भूस्वामित्व का पूर्ण विसर्जन किया जा चुका है। हाथल के सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि यहाँ प्रारम्भ से ही जमीन किसी एक व्यक्ति के नाम नहीं थी। यह गाँव की भूमि पर बसा है और भू-स्वामित्व 'खोत' नामक ग्रामपंचायत के अन्तर्गत था। इस खोत

पंचायत में पाँच सदस्य होते थे। भूमि अधिक होने के कारण व्यक्तिगत स्वामित्व की उलझन सामने नहीं आयी। परन्तु ग्रामदान के पूर्व जमीन मुख्यतया ब्राह्मणों के हाथ में थी। अन्य जातियाँ उनके अधीन थीं। ग्रामदान के बाद सभी जातियों ने स्वामित्व-विसर्जन पूर्ण रूप से स्वीकार किया और पुरानी पंचायत से स्वामित्व लेकर अधिकार ग्रामसभा को सौंपा गया। ऐसा निर्णय किया गया कि भूमि पर ग्रामसभा का अधिकार होगा, जिसमें गाँव का प्रत्येक बालिग सदस्य होगा। इस सिद्धांत को स्वीकार करने के बाद गाँव की जमीन का पुनर्वितरण किया गया, इसके लिए कमिटियाँ बनायी गयीं। ता० २६-५-'६२ की बैठक में भूमि-वितरण के सिद्धान्त के अनुसार गाँव की भूमि का वितरण किया गया। उस सिद्धान्त में कालान्तर में परिवर्तन भी किये गये। नये परिवर्तन के अनुसार जिन्हें और जमीन चाहिए थी, उन्हें और अधिक जमीन दी गयी। परन्तु ग्रामसभा की पक्की हिदायत यह है कि यदि कोई जमीन पर खेती नहीं करता है तो उसकी काश्त की जमीन अन्य किसीको देने का अधिकार ग्रामसभा को ही है। अतः सभी खेती करते हैं। अब प्रश्न किया जा सकता है कि स्वामित्व-विसर्जन की मान्यता गाँव में कितनी है? इसमें गाँववाले कुछ लाभ देखते हैं या नहीं? स्वामित्व-विसर्जन का गाँववाले क्या अर्थ समझते हैं? इन प्रश्नों की दिशा निम्नलिखित सारिणी में देख सकते हैं :

स्वामित्व-विसर्जन : विचार-परिवर्तन की दृष्टि से

(साक्षात्कार-संख्या-३०)

वक्तव्य	संख्या
यहाँ पहले से ही जमीन गाँव की थी।	२९
ग्रामदान के बाद जमीन ग्रामसभा की हो गयी।	३०
इससे भूमि सुरक्षित हो गयी।	३०
जो जोतेगा उसीको जमीन मिलती है, इस कारण सब खेती करते हैं।	२८
चरागाह, जंगल की सुरक्षा हुई।	२६
बाहर के लोगों से जमीन का झगड़ा समाप्त हो गया।	२५
आपस में जमीन को लेकर झगड़े नहीं होते हैं।	२९
लगान-वसूली एवं अन्य तरीकों से कर्मचारियों की परेशानी से मुक्ति मिली।	२८
स्वामित्व-विसर्जन अर्थात् जमीन पर सबका हक।	२५
जो जोते उसके हाथ में जमीन रहती है।	२४

उपरोक्त सारिणी से स्वामित्व-सम्बन्धी धारणा का अन्दाज लग जाता है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि अधिकांश लोगों ने स्वामित्व-विसर्जन से लाभ का अनुभव किया।

गाँववालों ने व्यवहारगत लाभ को व्यक्त करते हुए कहा कि **'सबसे बड़ा लाभ सरकारी कर्मचारियों से मुक्ति है।'** अब सब काम ग्रामसभा कर लेती है, हम मेहनत करते हैं, खाते हैं। एक रुचिकर संवाद यहाँ सहज ही याद हो जाता है। एक १२ वर्ष का लड़का, जो मेरा सामान ले जा रहा था, उससे मैंने उसके परिवार के बारे में जानकारी चाही। मेरे इस प्रश्न के उत्तर में कि **'तुम्हारे पास कितनी जमीन है?'** उस हरिजन बालक ने जवाब दिया, **"हम १२ बीघा जमीन जोतते हैं। पर उसे बेच नहीं सकते। हाँ, कमाकर खा सकते हैं। लेकिन यदि उस पर खेती भी नहीं करते तो वह दूसरों को दे दी जाती है।"** मैंने सहज ही पूछा, **"ऐसा क्यों? जमीन तुम्हारी है न, दूसरे को क्यों दी जायेगी?"** उसका उत्तर था, **"जब हम जोतें तो हमारी है, नहीं जोतें तो हमारी कैसे होगी? जमीन तो सबकी है। बेकार पड़े रहने से अच्छा है कोई भी जोते।"** उसके बाद रास्ते भर उस बालक ने अपनी समझभर खेतों का परिचय कराया। इस वर्ष वर्षा न होने के कारण सबकी खेती मारी गयी, यह दर्द उसके दिल में था। हम उसके वक्तव्य से चकित रह गये। उसने जिस सहजता से स्वामित्व-विसर्जन की बात प्रकट की उससे यही लगा कि उस हरिजन बालक के मन में—भूमि निजी स्वामित्व के रूप में हो सकती है, उसकी खरीद-बिक्री भी हो सकती है,—यह भावना है ही नहीं।

अन्य लोग जिनसे हमने साक्षात्कार किये—हरिजन, अन्य जाति, ब्राह्मण सभी—उनका सामान्य मत था कि जमीन ग्रामसभा की होने से सबको लाभ है। जमीन खरीद-बिक्री की चीज नहीं है। एक बुजुर्ग ने मुझे बार-बार यह समझाने का प्रयास किया कि पास-पड़ोस के गाँवों में व्यक्तिगत स्वामित्व होने से काफी झगड़े एवं अन्य परेशानियाँ होती हैं। मेरे इस प्रश्न के उत्तर में कि 'फिर वे क्यों नहीं ग्रामदान करते हैं?' उन्होंने कहा कि 'अब वे भी समझ रहे हैं, पर उनके यहाँ आगे बढ़नेवाला कोई नहीं। फिर आन्तरिक कमजोरियाँ भी हैं।'

हाथल की भूमि-व्यवस्था परम्परा से विशेष ढंग की थी। परन्तु ग्रामदान के बाद इस व्यवस्था में कई परिवर्तन हुए, जैसे—
(१) पहले भूमि की असमानता अधिक थी।
(२) भूमि ब्राह्मणों के अधिकार में ही थी।
(३) सामाजिक स्तरीकरण अधिक था।
(४) अन्य जातियाँ उनके अधीन-सी थीं। ग्रामदान के बाद भूमि-स्वामित्व में तो परिवर्तन हुए ही, साथ-ही-साथ अन्य क्षेत्रों में भी कई परिवर्तन हुए। ग्रामदान से क्या लाभ हुए हैं? इसके उत्तर में जो वक्तव्य दिये गये उनसे परिवर्तन का अंदाज लगा सकते हैं :

(साक्षात्कार-संख्या-३०)

वक्तव्य	संख्या
खेती करने के इच्छुक को जमीन मिली।	३०
हमारी समस्याएँ यहीं सुलझ जाती हैं।	२८
सरकारी कर्मचारी की परेशानी समाप्त हो गयी।	२९
चरागाह और जंगल की व्यवस्था एवं सुरक्षा हुई।	२८
लगान के सामूहिक एकत्रीकरण से परेशानी खतम हो गयी।	२७
गाँव की अपनी पूँजी बनी।	२३
गरीबों को जमीन और रोजगार मिला।	२१
आपसी एकता बढ़ी।	२१
जमीन बेच नहीं सकते इससे (क) सभी खेती करते हैं, (ख) आगे के लिए भूमि सुरक्षित हो गयी।	२३
स्कूल, डाकघर खुले, कुछ उद्योग भी चलते हैं।	२९

→

www.vinoba.in

खादी, उसका गिरता हुआ मूल्य और अहिंसा

[विगत ११ व १२ अक्तूबर को मद्रास में आयोजित अ० भा० अणुव्रत सम्मेलन आचार्य श्री तुलसी के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। उक्त सम्मेलन में सक्रिय अणुव्रतियों के लिए आगामी वर्ष में प्रयोगात्मक अनिवार्य के रूप में *'खादी या हाथ-करघे का बना हुआ वस्त्र'* पहनने का प्रस्ताव पारित हुआ। इसी सन्दर्भ में मुनि श्री रूपचन्द्र और आचार्य श्री तुलसी के खादी के सम्बन्ध में हुए महत्त्वपूर्ण संवाद को हम पाठकों की सेवा में प्रस्तुत कर रहे हैं।—सं०]

मुनि श्री रूपचन्द्र : आज जब सभी दृष्टियों से खादी-वस्त्रों का अवमूल्यन होता जा रहा है और कुछ स्वार्थपरस्त लोगों ने इसे अपनी स्वार्थ-साधना का माध्यम भी बना रखा है, इस स्थिति में अ० भा० अणुव्रत समिति द्वारा किये जानेवाले इस निर्णय में—कि सक्रिय अणुव्रती के लिए खादी पहनना अनिवार्य होगा—आप क्या कोई विशेष लाभ देखते हैं ?

आचार्य श्री तुलसी : मैं इस निर्णय को अहिंसा के परिप्रेक्ष्य में देखता हूँ। एक अणुव्रती का आदर्श अहिंसा और अपरिग्रह को संपूर्णतया स्वीकार कर नहीं चल सकता। इसलिए वह अपने जीवन-निर्वाह के लिए उन साधनों को अपनाना चाहता है, जिनमें हिंसा और परिग्रह की अल्पता हो। किसी भी प्रकार के उद्योग में हिंसा का सर्वथा अभाव हो, यह कठिन है। किन्तु हिंसा का तारतम्य अवश्य होता है। खादी-उद्योग में मैं अल्पारम्भ, अल्प-हिंसा और अल्प-परिग्रह देखता हूँ। जैन-आगमों में अहिंसा का सूक्ष्म विश्लेषण देते हुए बड़े कल-कारखानों को महा-आरम्भ और महा-परिग्रह का स्थान बताया गया है। मैं इस निर्णय में सबसे बड़ा यही लाभ देखता हूँ कि यह अल्प-हिंसा-जन्य वस्त्र है।

खादी-वस्त्रों के प्रति होनेवाले सम्मान का आज अवश्य अवमूल्यन हुआ है, किन्तु खादी के मूल में ठहरे हुए मूल्यों का महत्त्व आज भी कम हुआ हो, ऐसा मैं नहीं मानता। महात्मा गांधी ने जिन कारणों से चरखा-आन्दोलन का सूत्रपात किया, उनमें अहिंसा के साथ-साथ और भी अनेक कारण थे। विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, राष्ट्र की गिरती हुई आर्थिक स्थिति, स्वावलम्बन, गरीबी, बेकारी, बेरोजगारी, गाँवों का विकास आदि अनेक राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान उन्होंने इस चरखे में देखा और इसलिए उन्होंने इस पर विशेष जोर दिया। इनमें से अधिकतर समस्याएँ आज भी देश के सामने मुँह बाये खड़ी हैं। किन्तु चरखे का अवमूल्यन हो जाने से और बड़े-बड़े कल-कारखानों को अधिक प्रोत्साहन मिलने से देश की स्थितियाँ दिन-प्रतिदिन उलझती ही जा रही हैं।

विनोबाजी कहा करते हैं कि चरखा गांधीजी की सबसे बड़ी सूझ है। इसका आशय यही है कि गांधीजी की सर्व-हित और सर्वोदय की कल्पना इस चरखे से ही साकार की जा सकती है। उन्होंने अपने सपनों का जो भारत बनाया था, उसके आधार में चरखा ही था। चरखा यानी बेकारी और बेरोजगारी को दूर करने का साधन; चरखा यानी स्वदेशी वस्त्रों का उत्पादन, जिससे विदेशी वस्त्रों के आयात पर स्वयं असर आये, चरखा यानी जनता की गरीबी को दूर करने का सरलतम उपाय, जिससे राष्ट्र आर्थिक दृष्टि से स्वयं समृद्ध हो, और चरखा यानी ग्रामों की आत्म-निर्भरता, ग्रामों में खुशहाली और ग्रामों का विकास। लेकिन गांधीजी के बाद इस आवाज में ढीलापन आ गया। परिणाम स्पष्ट है कि देश में गरीबी, बेकारी और बेरोजगारी ज्यों-की-त्यों कायम है, आर्थिक दृष्टि से भी वह अबतक आत्मनिर्भर नहीं बना है और गाँव के लोग शहरों की ओर दौड़े आ रहे हैं। शहरों की आबादी बहुत अधिक तेजी से बढ़ रही है और गाँव खाली होते जा रहे हैं।

गांधीजी पहला महत्त्व मनुष्य के श्रम को देते थे। वे अर्थ और सत्ता का केन्द्रीकरण होना ठीक नहीं समझते थे। केन्द्रीकरण का अर्थ ही है शहरों का विकास। एक बड़ी मिल की स्थापना का मतलब होता है हजारों मजदूरों का गाँवों को छोड़कर शहर में आना। उस एक मिल के उत्पादन का मतलब है लाखों हाथों का बेकार हो जाना। अमेरिका जैसे धनाढ्य देश में भी आज बेकारी की समस्या है। इसका एकमात्र कारण अर्थ का केन्द्रीकरण ही है। भारत सरकार ने स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद बड़े कल-कारखानों को अधिक प्रश्रय दिया। परिणामस्वरूप लघु उद्योग स्वयं पिट गये। आज स्थिति यह है कि जहाँ पाकिस्तान को चरखा-उद्योग से बड़ा लाभ होता है, वहाँ भारत घाटा उठा रहा है।

खादी का अवमूल्यन इस दृष्टि से अवश्य स्वीकार किया जा सकता है कि कुछ लोगों ने इससे अनुचित लाभ उठाने की कोशिश की है, किन्तु अहिंसा सादगी और श्रम का वह आज भी सक्रिय प्रतीक है और देश की अनेक समस्याओं का समाधान भी इसमें दिखाई देता है।

मुनि श्री रूपचन्द्र : क्या विकेन्द्रीकरण की नीति में आप आध्यात्मिक लाभ भी देखते हैं ?

आचार्य श्री तुलसी : केन्द्रीकरण का अर्थ है शक्ति का एक जगह में सिमट आना, जहाँ सबमें काम करनेवाली शक्ति और सबके काम आनेवाली शक्ति एक स्थान पर सिमट

वक्तव्य	संख्या
:→कोई विशेष लाभ नहीं दिखता, फिर भी २ हम साथ हैं।	
धार्मिक एवं सांस्कृतिक एकता बढ़ी है।	१४
छोटी जाति में जागृति आयी है।	१३

उपरोक्त वक्तव्यों से साफ जाहिर है कि स्वामित्व-विसर्जन के लाभ से अतिरिक्त ग्रामदान के कई लाभ गाँववालों को हुए ऐसा वे महसूस करते हैं। ग्रामदान में सभी लोग शामिल हैं, इस कारण आपसी टकराव नहीं है।

—अवध प्रसाद

www.vinoba.in

आती है, वहाँ एक के सिवाय सबका शक्ति-शून्य होना स्वाभाविक है। वह शून्यता फिर एक नयी शक्ति को जन्म देती है, जिसमें वर्तमान व्यवस्था से जूझने का सामर्थ्य होता है।

हम औद्योगिक क्रान्ति को ही लें। इस क्रान्ति के बाद विश्व में बड़े-बड़े उद्योगों का विस्तार हुआ है; किन्तु हिंसा, तनाव और यांत्रिकता भी क्या इसी क्रान्ति की देन नहीं है? बड़े-बड़े कल-कारखाने स्थापित हुए और वहाँ लाखों-लाख मजदूर काम करने लगे। फिर उनके यूनियन बने और एक नयी शक्ति का उदय हुआ। फिर उसके बाद थोड़े से आपसी असंतोष के साथ ही हड़ताल, घेराव, सत्याग्रह, लूट-मार, तोड़-फोड़ आदि हिंसात्मक प्रवृत्तियों का जन्म हो गया। फिर उनको दबाने के लिए सत्ता ने अतिनियंत्रण का सहारा लिया।

आज स्थिति यह है कि उद्योगपति और मजदूर, ये दो ऐसे वर्ग बन गये हैं, जिनके बीच निरन्तर संघर्ष अनिवार्य है। इस प्रकार केन्द्रीकरण, सामूहिक हिंसा और अतिनियंत्रण, ये क्रमशः एक-दूसरे के अनिवार्य परिणाम हो गये हैं।

विकेन्द्रीकरण में हिंसा और संघर्ष के अवसर नहीं के बराबर होते हैं। वहाँ एक का नुकसान दूसरे पर असर नहीं डाल सकता। एक मिल के बन्द होने का मतलब है हजारों व्यक्तियों का बेकार होना। हजारों के बेकार होने का मतलब है एक बहुत बड़े समूह में असंतोष, रोष और आक्रोश का जन्म होना, जिसका परिणाम एकमात्र हिंसा ही हो सकता है।

विकेन्द्रित व्यवस्था में विकास का सबको समान अवसर मिलता है। सबके सब समान स्तर पर विकास कर सकें, यह वहाँ भी संभव नहीं होता। किन्तु समान अवसर की सुलभता से किसीके दिल में असन्तोष या रोष जैसी स्थिति को उत्पन्न होने का मौका नहीं मिलता। हिंसा, अतिनियंत्रण, तनाव आदि को जिस व्यवस्था में अवकाश नहीं मिलता और समता और समानता को जिस व्यवस्था में पनपने का अवकाश मिलता है यह अपने आप में एक बड़ी आध्यात्मिक उपलब्धि है।

('अणुव्रत' से साभार)

गांधी-शताब्दी वर्ष १९६८–६९

गांधी-विनोबा का ग्राम-स्वराज्य का संदेश गाँव-गाँव, घर-घर पहुँचाइए और जन-जन को उसके लिए कृत-संकल्प कराइए। सच्चे स्वराज्य का अब यह ही रास्ता है।

इस निमित्त उपसमिति द्वारा निम्न सामग्री पुरस्कृत/प्रकाशित की गयी है :—

पुस्तकें—

(१) **जनता का राज्य**—लेखक : श्री मनमोहन चौधरी, पृष्ठ ६२, मूल्य २५ पैसे। ग्रामदान-आन्दोलन की सरल-सुबोध जानकारी।

(२) **Freedom for the Masses**—'जनता का राज' का अनुवाद, पृष्ठ ७६, मूल्य २५ पैसे।

(३) **शान्तिसेना परिचय**—लेखक : श्री नारायण देसाई, पृष्ठ ११८, मूल्य ७५ पैसे। शान्तिसेना विचार, संगठन, कार्यक्रम आदि की जानकारी देनेवाली, हर शान्ति-प्रेमी नागरिक के पास रखी जाने योग्य।

(४) **हत्या एक आकार की**—लेखक : श्री ललित सहगल, पृष्ठ ९६, मूल्य रु० ३.५०। गांधीजी के हत्यारे के हृदय में हत्या से पूर्व चलनेवाले अन्तर्द्वन्द्व का प्रभावपूर्ण सशक्त चित्रण।

(५) **A Great Society of Small Communities**—लेखक : सुगत दासगुप्ता, पृष्ठ ७८, मूल्य रु० १०.००। क्रान्ति में ग्रामदान-आन्दोलन का स्थान तथा ग्रामदानी गाँवों के सन्दर्भ में आन्दोलन की गतिविधि का विवेचन और समीक्षा।

वितरण और प्रदर्शन की सामग्री—

फोल्डर—(१) गांधी, गाँव और ग्रामदान (२) गांधी, गाँव और शान्ति (३) ग्रामदान क्यों और कैसे? (४) ग्रामदान क्या और क्यों? (५) ग्रामदान के बाद क्या? (६) ग्रामसभा का गठन और कार्य (७) गाँव-गाँव में खादी (८) सुलभ ग्रामदान (९) देखिए : ग्रामदान के कुछ नमूने।

पोस्टर—(१) गांधी ने चाहा था : सच्चा स्वराज्य (२) गांधी ने चाहा था : स्वावलम्बन (३) गांधी ने चाहा था : अहिंसक समाज (४) ग्रामदान से क्या होगा? (५) गांधी जन्म-शताब्दी और सर्वोदय-पर्व।

सामग्री मर्यादित रूप में निम्न स्थानों से प्राप्त की जा सकती है :—

(१) गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति), दुंकलिया भवन, कुंदीगरों का भैरों, जयपुर—३ (राजस्थान)। (२) सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी–१ (उत्तर प्रदेश)

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति की गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति द्वारा प्रसारित

www.vinoba.in

विश्राम भाई "सर्वोदयी"

"मेरी जीवन-कहानी सुनना चाहते हैं ? मैं क्या सुनाऊँ भाईजी !" हमारे प्रतिनिधि के आग्रह पर अत्यन्त संकोच के साथ बस्ती जिले के कार्यकर्ता साथी ने रामकहानी सुनायी :

"मैं तो कोई पढ़ा-लिखा आदमी नहीं हूँ। कक्षा ४ का फेल आदमी हूँ, और गरीब परिवार का हूँ। गरीबी के कारण १० वर्ष की आयु में पड़ोस के एक महाजन की दूकान पर मुझे सिर्फ डेढ़ रुपये मासिक पर नौकरी करनी पड़ी सन् १९३६ में !

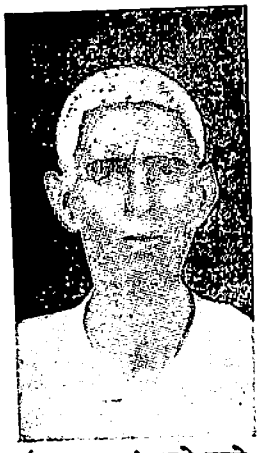

'भूदान-यज्ञ' पढ़ते-पढ़ते 'भूदानी' बन गया

१९४० तक इसी १॥) मासिक पर नौकरी करता रहा। बेकार हो गया। उन दिनों बड़ी ही मुश्किल से अपना पेट पाला, दिन बड़ी मुश्किल से गुजारे। किसी तरीके से सन् १९४२ में फिर नौकरी लगी। एक महाजन —जो कि मेरे रिश्तेदारों में से थे—उसने मुझे चार रुपये मासिक पर सन् १९४४ तक रखा। सन् '४४ के बाद जब मुझे कुछ होश-हवास हुआ तो मैंने दूसरे महाजन की दूकान पर ६) मासिक पर नौकरी करना शुरू किया। उधर गांधीजी का आन्दोलन खूब छिड़ा हुआ था। आजादी के दिनों मैं वे ब्लैक-मार्केटिंग में व्यस्त रहा। सन् '४६ में मैंने नौकरी छोड़कर अपना काम शुरू किया और थोड़े समय अपना व्यापार वगैरह किया।

"उसके बाद जब मैं कुछ साथी कांग्रेसियों से मिला, तो मेरे दिल-दिमाग में टकराहट पैदा हुई। और सन् १९५२ तक कांग्रेस का पूरा जोर लगाकर काम किया। कांग्रेस में काम करते-करते मुझे कुछ मित्र मिले और उनके साथ में घूमते-घामते राजनैतिक पार्टियों से सम्पर्क हुआ। लेकिन मुझे उन लोगों से कोई शांति नहीं मिली।

"अपना कारोबार छोड़-छाड़कर मैं गरीबी का जीवन बिताने लगा। कांग्रेस के नेताओं से जब कुछ कभी अपनी बात कहता था तो वे बेवकूफ बनाते थे। मैं शुरू से सत्य के आश्रित और भगवान के भरोसे पर रहने की कोशिश करता था। सन् १९५२ में विनोबाजी की पदयात्रा के सिलसिले में बस्ती में पड़ाव था। मैंने जब सुना कि विनोबाजी सन्त हैं, तो मैंने उनके बारे में कुछ मित्रों से पूछताछ की। मुझे बड़ी रुचि हुई। मेरे एक मित्र ने कहा कि उनकी पत्रिका 'भूदान-यज्ञ' निकलती है, उसको देखिये।···और 'भूदान-यज्ञ' देखते-देखते मैं 'भूदानी' बन गया। 'भूदान-यज्ञ' पत्रिका के ग्राहक भी बनाना शुरू किया और विनोबाजी के भाषणों पर पूरा-पूरा ध्यान देता रहा। मैंने अपने को और अपने परिवार को इसी विचार में डुबो दिया। और कहाँ तक कहूँ ! मैंने अपने ऊपर बहुत आक्रमण किया। मेरे माता-पिता-भाई का भरापूरा परिवार मौजूद है। मैं परिवार का एक छोटा महाजन ही बन गया था, लेकिन असत्य जीवन पसन्द नहीं आया और सत्य जीवन बिताना पसन्द किया। आज तक मेरा जीवन संघर्षमय बीत रहा है। कितना कहूँ, बड़ा कष्टकर मालूम होता है। ईश्वर जो कुछ करता है, अच्छा करता है।

"मई १९५१ में विनोबा का दर्शन अजमेर में हुआ, तभी से मुझे कुछ दूसरा रास्ता नहीं दिखाई देता। जबतक सर्वोदय नहीं होगा तबतक मुझे सन्तोष भी नहीं होगा। इधर ग्रामदान ने तो और रंग ला दिया है। विनोबा का आन्दोलन और गांधी का देश अब जगमगाया है। २० सालों में तो लोगों ने अपने देश को फिर से परावलम्बी बना दिया। अब फिर आ गयी है क्रान्ति, उसको सफल करना है।

"और क्या कहूँ, इस वक्त मेरे परिवार का जीवन बड़े कष्ट में पड़ गया है। पूरा परिवार चरखा, चक्की आदि चलाने में ही समय लगाता है। परिवार का कपड़ा चरखे से, और भोजन कुछ सर्वोदय-मित्रों से, इस तरह चलता है। समय-समय पर अन्न-संग्रह करता रहता हूँ। कभी फाके भी करने पड़ते हैं !"

"बच्चे ?"

"मेरे लड़के सब पढ़ते-लिखते हैं। बड़ा लड़का जिसकी उम्र २० साल है, बी० ए० ज्वाइन कर रखा है, और दो लड़कियाँ जूनियर हाईस्कूल में पढ़ती हैं। और एक लड़का प्राइमरी में पढ़ता है। कुल ४ बच्चे हैं। मेरे माता-पिता हिन्दू धर्म के बड़े ही भगत हैं। मैं तो उनके विचार से बिलकुल अलग हो गया हूँ।

"समाज में अकेला मालूम पड़ता हूँ। समाज ने तो मुझे पागल घोषित कर दिया है ! लेकिन कुछ मित्रों ने मेरा पूरा साथ दिया है। उनकी वजह से मैं कुछ शान्ति पाता हूँ। रोज-रोज गाँव में जाता हूँ और ग्रामदान का विचार समझाता हूँ। और शाम को अपने परिवार में जो कुछ ईश्वर देता है उसको पाता हूँ। सर्वोदय के काम में लगा हूँ। अब भगवान का ही सहारा है।

"जिला-प्रतिनिधि भी चुना गया हूँ। और हर सम्मेलन में पहुँचता रहता हूँ। बिहार में 'बीघा-कट्ठा'-अभियान में पूर्णिया जिले में एक माह का समय दिया था। गाँव-गाँव में जमीन माँगकर बाँटा है। अब जितना समय मेरे जीवन का बाकी है वह सब सर्वोदय के लिए ही बिताने का सोचा है। ऐसी प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि मुझे और मेरे परिवार को साथ-साथ ऐसे पुण्य-काम में लगे रहने की शक्ति दे। अपने जिले में ग्रामदान-अभियान शुरू करने जा रहा हूँ। उम्मीद है, बस्ती जिला जल्दी ही जिलादान में आ जायगा। और उसके बाद तो प्रान्तदान होकर ही रहेगा।

"गाँव-गाँव में जाना, ग्रामदान की बातें समझाना और ग्रामदान करवाना—इसके अलावा अपने बारे में अधिक कुछ सोच नहीं पाता।"

विश्राम भाई से हुई इस मुलाकात में हमारे प्रतिनिधि ने महसूस किया कि विचार और भावना के बल पर परिस्थिति से जूझते हुए जिन्दादिल जिन्दगी से मुलाकात हुई है, जो ग्रामस्वराज्य की नींव का एक ठोस पत्थर है। •

पत्रिका-प्राप्ति के प्रमुख स्थान

www.vinoba.in

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन की सर्वोदय-आन्दोलन से सम्बन्धित पत्र-पत्रिकाओं का चन्दा सीधे हमारे कार्यालय सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी–१ के पते पर भेज सकते हैं। इसके अलावा नीचे प्रकाशित पतों पर भी चन्दा जमा करा सकते हैं :

उत्तर प्रदेश :

(१) श्री विनय अवस्थी, गांधी-विचार केन्द्र, १५।२३६ सिविल लाइन्स, कानपुर–१

(२) श्री गोपाल नारायण शिरोमणि, १५ रावतपाड़ा, आगरा

(३) श्री यमुनाप्रसाद शास्त्री, जिला सर्वोदय मण्डल, फर्रुखाबाद

(४) श्री रामवृक्ष शास्त्री, श्री गांधी आश्रम, खादी भवन, बलिया

(५) श्री विश्राम भाई, मु० पो० बखिरा बाजार, बस्ती

(६) श्री मानसिंह रावत, लक्ष्मी आश्रम, कौसानी, अलमोड़ा

(७) श्री गजानन्दजी, जिला सर्वोदय कार्यालय, गाजीपुर

(८) मेवालालजी, जिला सर्वोदय कार्यालय, आजमगढ़

(९) श्री अभयानन्दजी, जिला सर्वोदय कार्यालय, बुलन्दशहर

(१०) श्री सुरेशराम भाई, ५२ शहरारा बाग, इलाहाबाद–३

(११) श्री जयन्ती प्रसाद, सर्वोदय आश्रम, सादाबाद, मथुरा

(१२) श्री सुन्दरलाल बहुगुणा, ठक्कर बापा छात्रावास, टिहरी गढ़वाल

(१३) उत्तर प्रदेश के श्री गांधी आश्रम के सभी केन्द्रों पर

बिहार :

(१) श्री संयोजक, जिला सर्वोदय मण्डल, सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा, पूर्णिया

(२) श्री धर्मवीर प्रसाद सिंह, सर्वोदय साहित्य सदन, गोविन्द मित्रा रोड, पटना–४

(३) श्री हेमनाथ सिंह, भूमि-सेना विद्यालय, खादीग्राम, मुंगेर

(४) श्री रघुनाथ ओझा, खादी सदन, नरसिंहपुर, वाया-ढोली, मुजफ्फरपुर

राजस्थान :

(१) श्री सिद्धेश्वर मोदी, श्री गांधी आश्रम, डूंगरपुर

(२) श्री संयोजक, जिला सर्वोदय मण्डल, मकराना, जिला नागौर

(३) श्री प्रभुदयाल वैद्य, जिला खादी ग्रामोदय समिति, डीग, जिला भरतपुर

(४) किताब-घर, जोधपुर

(५) मेसर्स हिन्द समाचार एजेंसी, करौली

मध्यप्रदेश :

(१) संयोजक, जिला सर्वोदय मण्डल, गांधी स्मारक भवन, छतरपुर

(२) कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा, सर्वोदय शिक्षण समिति, माचला, इन्दौर

(३) श्री व्यवस्थापक, सर्वोदय साहित्य भंडार, म० गांधी मार्ग, इन्दौर–२

(४) श्री महेन्द्र कुमारजी, १२८ तिलक पथ, इन्दौर–२

(५) श्री संयोजक, जिला सर्वोदय मण्डल, गांधी चौक, शहडोल

(६) श्री कामताप्रसाद तिवारी, पो० ढिल्ला, जिला टीकमगढ़

(७) श्री संयोजक, जिला सर्वोदय मण्डल, ताल दरवाजा, टीकमगढ़

(८) मध्यभारत भूदान-यज्ञ पर्षद, श्री पाटणकर का बाड़ा, ग्वालियर–१

(९) विजयभाई, पो० केसली, जि० सागर

(१०) श्री सत्यनारायण शर्मा, जिला सर्वोदय कार्यालय, सिवनी

महाराष्ट्र :

(१) श्री ठाकुरदास बंग, सेवाग्राम, वर्धा

(२) बम्बई सर्वोदय मण्डल, "मणिभुवन", १९ लेबरनम् रोड, गांवदेवी, बंबई–७

(३) श्री द्वारका प्रसाद रा० अग्रवाल, गांधी चौक, हिंगोली, जिला परभणी

(४) श्री माणिक कोटेचा, परिषद् कन्या हाईस्कूल, उदगीर, जि० उस्मानाबाद

(५) श्री मोतीलालजी मंत्री, बीड़

(६) विट्ठलदास बोदाणी, "कीर्ति वर्क्स", ९८–बी, लेडी हार्डिंज रोड, माहिम, बम्बई–१६

दिल्ली :

(१) श्री व्यवस्थापक, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, नयी दिल्ली–१

(२) सेन्ट्रल न्यूज एजेंसी, २३।९०, कनाट सर्कस, नयी दिल्ली–१

पंजाब :

(१) श्री यशपाल मित्तल, प्रस्थान आश्रम, पठानकोट

(२) श्री बनारसीदास गोयल, जिला सर्वोदय मण्डल, फिरोजपुर कैंट

हरियाना :

(१) श्री संयोजक, जिला सर्वोदय मण्डल, अनाज मण्डी, हिसार

(२) श्री खुशीरामजी, जिला सर्वोदय मण्डल, पो० रेवाड़ी, जि० गुड़गाँव

हिमाचल प्रदेश :

(१) श्री संयोजक, जिला सर्वोदय मण्डल, लाजपत भवन, पो० गग्गल, जि० कांगड़ा

गुजरात :

(१) श्री व्यवस्थापक, "भूमिपुत्र" कार्यालय, गुजरात पागा, बड़ौदा–१

(२) विजय स्टोर्स, स्टेशन रोड, पो० आनंद, जिला खेड़ा

प० बंगाल :

(१) श्री दातारामजी मक्कड़, ४७ जकरिया स्ट्रीट, कलकत्ता–७

(२) श्री राधेलालजी अग्रवाल, बी–१४, गार्डन रीच रोड, कलकत्ता–२४

(३) सर्वोदय कार्यालय, सी–५२, कालेज स्ट्रीट मार्केट, कलकत्ता–१२

असम :

(१) सर्वोदय प्रकाशन समिति, चांदमारी, पो० बामुनी मैदान, गौहाटी

हमारी पत्र-पत्रिकाएँ

भूदान-यज्ञ	हिन्दी	साप्ताहिक	१०.००
नयी तालीम	हिन्दी	मासिक	६.००
गाँव की बात	हिन्दी	पाक्षिक	४.००
भूदान तहरीक	उर्दू	पाक्षिक	४.००
सर्वोदय	अंग्रेजी	मासिक	६.००
न्यूज लेटर	अंग्रेजी	मासिक	१०.००
विनोबा-चिन्तन	हिन्दी	मासिक	६.००

भूदान-यज्ञ के समाचार

बाराचट्टी (गया) में शांति-स्थापना का सफल प्रयास

विगत ६ अक्तूबर १९६८ को बाराचट्टी प्रखण्ड के शोभ नामक स्थान में श्री महावीर साव हलवाई एवं जनाब गुलाब नबी खाँ के आदमियों में किसी बात को लेकर झड़प हो गयी और बात इतनी बढ़ गयी कि उसने झगड़े का रूप ले लिया। घंटे-दो-घंटे के अन्दर आसपास के गाँवों में बातें फैल गयीं और घटना हिन्दू-मुसलमान झगड़े के रूप में परिणत होने लगी। संयोग अच्छा था कि तत्काल इस क्षेत्र के भूतपूर्व एम० एल० ए० श्री श्रीधर नारायण एवं जनाब कासिम खाँ, मुखिया, भदैया पंचायत घटना-स्थल पर पहुँच गये, जिससे उस समय स्थिति कुछ शान्त हो गयी। परन्तु झगड़े का मामला पुलिस में दर्ज हो गया। बाद में शरारती लोगों को मौका मिला और वे लोग बातों को बढ़ा-चढ़ाकर इधर-उधर फैलाने लगे। दोनों पक्ष के लोगों में तनाव बढ़ने लगा और नौबत यहाँ तक आ गयी कि किसी भी समय इस क्षेत्र में कहीं भी अचानक कोई दुर्घटना हो सकती है, ऐसा वातारण बन गया।

हम लोग ग्रामदान-प्राप्ति के कार्य में लगे थे। श्री जगदेव नारायण, सर्वोदय-कार्यकर्ता एवं श्री सत्येन्द्र पाठक, छात्र अनुग्रह कालेज, गया के सहयोग से स्थिति पर काबू पाने का प्रयास करने लगा। एक सप्ताह के परिश्रम के बाद इस क्षेत्र के हिन्दू-मुसलमान के प्रमुख व्यक्तियों की एक बैठक शोभ ग्रामदान-प्राप्ति कार्यालय में ता० १७-१०-'६८ को बुलायी गयी। लोगों का सहयोग मिला और बैठक में २२ लोगों की एक शान्ति-समिति की स्थापना की गयी। झगड़े को खत्म करने के बारे में भी विचार हुआ। दूसरे दिन १८-१०-'६८ को शान्ति-समिति की एक बड़ी बैठक हुई, जिसमें शान्ति बनाये रखने के लिए कई प्रस्ताव स्वीकृत किये गये तथा श्री महावीर साव एवं जनाब गुलाब नबी खाँ के झगड़े समाप्त करा देने के लिए ६ व्यक्तियों की उपसमिति बनी। सभी बैठकों में दोनों पक्षों के लोग उपस्थित थे। और १८-१०-'६८ को उपसमिति के सामने तो दिल खोलकर दोनों ने बातें कीं और सभी तरह के झगड़े दोनों ने स्वयं समाप्त कर लिये। कोर्ट से भी मुकदमा उठा लिया गया। इस प्रयास से लोगों को बड़ा सन्तोष हुआ। तनाव बिलकुल खतम हो गया और शान्ति स्थापित हो गयी। सब कार्य पूर्ववत् चलने लगा। शान्ति समिति को सजीव एवं स्थायी बनाने का प्रयास चल रहा है। प्रखण्डदान करने में कुछ विलम्ब हो गया, परन्तु इस कार्य से हमारे प्रति लोगों में विश्वास बढ़ा।

—रामाश्रय सिंह

भूदान की भूमि का वितरण

गत तीन माह में म० प्र० के मुरेना जिले की श्योपुर तहसील के १ ग्राम में २७ भूमिहीन परिवारों में १३१ एकड़ भूमि वितरित की गयी। इस वितरण कार्य में १२ हरिजन, १५ अन्य भूमिहीन परिवारों को क्रमशः ५४, ७७ एकड़ भूमि मिली। इसी प्रकार विजयपुर तहसील के १० ग्रामों में २१ हरिजन, ३१ आदिवासी तथा ६७ अन्य भूमिहीन परिवारों में क्रमशः ८२, ९८, २३८ एकड़ भूमि वितरित की गयी। गुना जिले की गुना तहसील के ९ ग्रामों में ३ हरिजन, २१ आदिवासी तथा २२ अन्य परिवारों में क्रमशः ९, ८१, ८३ एकड़ भूमि वितरित की गयी।

कुल २० ग्रामों में १९२ परिवारों में ७२२ एकड़ भूमि का वितरण-कार्य सम्पन्न हुआ, जिनमें ४६ हरिजन, ५२ आदिवासी, व ९४ अन्य परिवारों को क्रमशः १५४, १७९, ३९८ एकड़ भूमि मिली।

—हेमदेव शर्मा
मंत्री, मध्यभारत भूदान-यज्ञ परिषद्, ग्वालियर

गांधी जन्म-शताब्दी संदेश-वाहक टोली

दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि द्वारा नियुक्त शताब्दी-संदेशवाहक टोली ने १२ अक्तूबर '६८ को मद्रास से अपनी यात्रा शुरू कर दी है। २० अक्तूबर को उक्त टोली सिंगापुर पहुँचेगी।

इन्दौर में आचार्यकुल प्रगति की ओर

१० सितम्बर, १९६८ को आचार्य श्री दादा धर्माधिकारी के सान्निध्य में इन्दौर में आचार्यकुल की विधिवत् स्थापना हुई। फिर १४ सितम्बर को क्रिश्चियन कालेज, इन्दौर के आचार्य श्री मोजेज की अध्यक्षता में आचार्यकुल की साधारण सभा की पहली बैठक हुई। इसमें कार्यकारिणी के २१ सदस्य सर्वानुमति से चुने गये और नीचे लिखा निर्णय किया गया :

आचार्यकुल की सदस्यता का वार्षिक शुल्क कम-से-कम पाँच रुपये रहे और वर्ष का आरम्भ २ अक्तूबर से माना जाय।

२७ सितम्बर, '६८ के दिन कार्यकारिणी की पहली बैठक हुई। उसमें भावी कार्यक्रम से सम्बन्धित कई महत्वपूर्ण निर्णय किये गये। उनमें से कुछ ये हैं :—

१. समिति के सब निर्णय सर्वानुमति से किये जायँ।

२. आचार्यकुल का विधान कठोर न हो। इसके सिद्धान्तों में आन्तरिक विश्वास रखनेवाले शिक्षकों का स्वागत किया जाय।

३. कार्यकारिणी की बैठकें महीने में कम-से-कम दो बार हों। सदस्य विभिन्न महाविद्यालयों के आमंत्रण पर निर्धारित स्थान पर इकट्ठा होकर विचार-विमर्श करें।

४. प्रत्येक महाविद्यालय में तरुण-शान्ति-सेना के निर्माण की पहल की जाय।

१२ अक्तूबर, '६८ को आचार्यकुल की कार्यकारिणी की एक बैठक आयुर्वेदिक कालेज में हुई। इसमें डा० सुरेन्द्र वर्मा और श्री दादाभाई नाईक ने अपने विचार प्रकट किये। श्री दादाभाई नाईक ने विनोबाजी का सन्देश सुनाते हुए कहा कि समाज की जागृति में वे आचार्यकुल का महत्व ग्रामदान-अभियान से भी अधिक मानते हैं।

विनोबाजी का कार्यक्रम

दिसम्बर : ३ हरिहरगंज
४ से १० सासाराम (शाहाबाद)
११ विक्रमगंज ,,
१२ से १९ आरा ,,
२० इलाहाबाद (उ० प्र०)

नये प्रकाशन

• **अध्यात्मतत्त्व सुधा** —विनोबा
विनोबाजी के अध्यात्म-विषयक विचारों का संकलन। मूल्य २.००

• **बापू के चरणों में!** —विनोबा
गांधीजी के सम्बन्ध में विनोबाजी के तलस्पर्शी विचारों का संकलन।
मूल्य १.२५

• **बापू की मीठी-मीठी बातें** —साने गुरुजी
मराठी के कोमल-करुण कलाकार और बालकों के हृदय को स्पर्श करनेवाले मनीषी लेखक की कथात्मक वानगी। मूल्य १.५०

• **भारतीय तरुण शांतिसेना**
शांति-सेना का एक अंग तरुण शांति-सेना है। तरुणों, खासकर विद्यार्थियों में राष्ट्रीय चेतना, शांति-स्थापना और देश के लिए कर्मनिष्ठा जगाने, उनमें अनुशासन पैदा करने, निर्भयता तथा जिम्मेदारी की भावना भरने की दृष्टि से यह संगठन उनका अपना है। पुस्तक में तत्सम्बन्धी आचार-संहिता आदि की जानकारी है। मूल्य ०.४० पैसे

पुनर्मुद्रण

नीचे लिखी पुस्तकों का पुनर्मुद्रण हुआ है। इनके मूल्य अब इस प्रकार हैं—

ग्रामदान विनोबा २.००
प्राकृतिक चिकित्साविधि डा० शरणप्रसाद २.५०
बापू की गृह-माधुरी —मनुबहन ०.४०
आत्मज्ञान और विज्ञान —विनोबा २.५०
सर्वोदय और साम्यवाद —विनोबा २.००
स्त्री-पुरुष सहजीवन—दादा धर्माधिकारी २.५०

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी–१

पठनीय **नयी तालीम** मननीय

शैक्षिक क्रांति का अग्रदूत मासिकी

वार्षिक मूल्य : ६ रु०

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी–१

दैनंदिनी १९६९

गांधी-शताब्दी के अवसर पर सन् १९६९ की जो दैनंदिनी हमारे यहाँ से प्रकाशित की गयी है उसका स्टाक बहुत ही कम बचा है, अतः वे संस्थाएँ, जो दैनंदिनी मँगाना चाहती हैं, रकम अग्रिम भिजवाकर या वी० पी० या बैंक के मार्फत प्राप्त कर लें; अन्यथा गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी निराश होना पड़ेगा।

आकार		मूल्य प्रति
क्राउन	७॥"×५"	३.००
डिमाई	९"×५॥"	३.५०

५० या उससे अधिक दैनंदिनियाँ एकसाथ मँगाने पर २५ प्रतिशत कमीशन और ग्राहक के निकटतम स्टेशन तक दैनंदिनी फ्री डिलेवरी से भिजवायी जाती है।

—संचालक
सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी–१

खादी और ग्रामोद्योग राष्ट्र की अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं
इनके सम्बन्ध में पूरी जानकारी के लिए

खादी ग्रामोद्योग (मासिक) पढ़िये **जागृति** (पाक्षिक)

(संपादक—जगदीश नारायण वर्मा)
हिन्दी और अंग्रेजी में समानांतर प्रकाशित

प्रकाशन का चौदहवाँ वर्ष।	प्रकाशन का बारहवाँ वर्ष।
विश्वस्त जानकारी के आधार पर ग्राम विकास की समस्याओं और सम्भाव्यताओं पर चर्चा करनेवाली पत्रिका। खादी और ग्रामोद्योग के अतिरिक्त ग्रामीण उद्योगीकरण की सम्भावनाओं तथा शहरीकरण के प्रसार पर मुक्त विचार-विमर्श का माध्यम।	खादी और ग्रामोद्योग कार्यक्रमों सम्बन्धी ताजे समाचार तथा ग्रामीण योजनाओं की प्रगति का मौलिक विवरण देनेवाला समाचार पाक्षिक। ग्राम-विकास की समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करनेवाला समाचार-पत्र।
ग्रामीण धंधों के उत्पादनों में उन्नत माध्यमिक तकनालाजी के संयोजन व अनुसंधान-कार्यों की जानकारी देनेवाली मासिक पत्रिका।	गाँवों में उन्नति से सम्बन्धित विषयों पर मुक्त विचार-विमर्श का माध्यम।
वार्षिक शुल्क : २ रुपये ५० पैसे एक अंक : २५ पैसे	वार्षिक शुल्क : ४ रुपये एक प्रति : २० पैसे

अंक-प्राप्ति के लिए लिखें

"प्रचार निर्देशालय"
खादी और ग्रामोद्योग कमीशन, 'ग्रामोदय'
इर्ला रोड, विलेपार्ले (पश्चिम), बम्बई–५६ एएस

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।